नारी की ... का

(समय सीमा सन् 1650 से 1850 ई० तक)

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
की
डी. फिल. उपाधि के लिये

शोध सार

।। शोध निर्देशक ।।

डॉ० जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव

एम ए., डी. फिल

अवकाश प्राप्त रीडर (हिन्दी विभाग)

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

।। शोध कर्ता ।।

रश्मि श्रीवास्तव

एम. ए (हिन्दी)

(इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद)
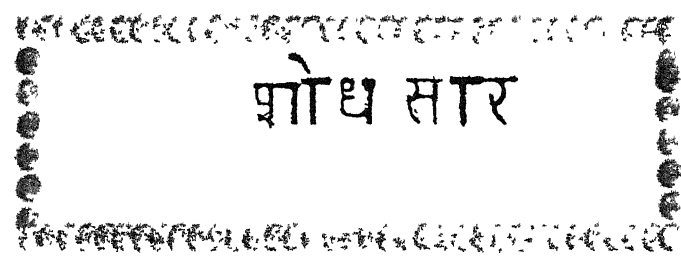
शोध सार

रीति शब्द हिन्दी साहित्य के उत्तर मध्यकाल की उस प्रेरक प्रवृत्ति को व्यक्त करता है जिसके भीतर कला कौशल तथा श्रृंगार प्रियता आदि सबका किसी न किसी प्रकार अन्तर्भाव हो जाता है। सम्राट शाहजहां के शासनकाल के उत्तरार्द्ध से हिन्दी साहित्य के तृतीय युग का आरम्भ होता है जिसे विद्वानों ने " रीतिकाल " की संज्ञा से विभूषित किया।

रीतिकाल में सर्व प्रमुख वृत्ति को लेकर आगे बढ़ी भौतिक जीवन की पूर्णता के लिए काम जीवन की सर्व प्रमुख वृत्ति मानी गयी। "काम" शब्द का अनेक अर्थों में प्रयोग हुआ अपने प्रचलित अर्थ में भिन्न लैंगिक सम्पर्क की इच्छा काम है। आदि-काल से ही नारी इसका मुख्य आकर्षण बनी रही है। भक्ति काल में नारी अपनी मर्यादाओं के दायरे में ही पड़ी रही। कहने का तात्पर्य यही है कि नारी जो इस विश्व की जन्मदात्री है जिससे सम्पूर्ण मानवीय जाति चलायमान है वही नारी रीतिकाल के काव्यों में आकर केवल शारीरिक सुख की साधन मात्र रह जाती है। सौन्दर्य इस काव्य धारा का साध्य है किन्तु सौन्दर्य के प्रति इन कवियों की दृष्टि संकुचित है क्योंकि इसके केन्द्र में नारी वर्तमान है। नारी के अंग-प्रत्यंग का सौन्दर्य वर्णन कवियों ने खुब खुले ढंग से किया।

प्रथम अध्याय में रीति युग में नारी की स्थिति का इतिहास के दर्पण से दिखाने की चेष्टा की है । सम्राट शाहजहां के शासनकाल के उत्तरार्द्ध से हिन्दी साहित्य का तृतीय युग आरम्भ होता है । इस्लाम में स्त्रियों की दशा बहुत खराब थी, परिवार में पुत्री का जन्म अशुभ माना जाता था । स्त्रियों को पुरुषों के अधीन दासी अथवा सेविका के रूप में स्वीकार किया गया था । मध्यकालीन भारतीय समाज में स्त्रियों के अधिकारों एवं स्तर में गिरावट आयी । मुस्लिमों के आगमन से पर्दा प्रथा, सती प्रथा, बाल-विवाह, बहु-विवाह, दहेज-प्रथा, दासी-प्रथा, देवदासी-प्रथा, वेश्यावृत्ति आदि कुरीतियों का प्रचलन था ।

द्वितीय अध्याय में रीतिकाल के कवियों ने अपनी रचनाओं में रसों की अपेक्षा शृंगार का वर्णन किया है । सामन्ती जीवन पद्धति आश्रयदाताओं का सब कुछ भूल कर कंचन, कामिनी और कामदेव के सेवन में लिप्त रहना तथा प्रेम और आसक्ति की सुरा पीकर मदहोश रहना इसी मनोवृत्ति तथा वातावरण के अनुकूल कविता कामिनी का नृत्य करना ही वह कारण था जिससे प्रेरित होकर रीतिबद्ध कवियों ने शृंगार-परक साहित्य की संरचना की ।

तृतीय अध्याय में रीतिकाल के प्रमुख कवियों में केशव, बिहारी, देव, घनानन्द, चिन्तामणि, मतिराम, पद्माकर आदि कवियों ने महिलाओं की छवि को निरूपित किया है । नारी की छवि को प्रेम और सौन्दर्य द्वारा प्रस्तुत किया है । इस काल के कवियों ने कामवृत्ति को उभारने के लिए नारी के सौन्दर्य को मादक एन्द्रिय तथा उत्तेजक बनाने की चेष्टा की । नारी का चित्रण इतने खुले ढंग से किया कि शृंगारिकता की जगह अश्लीलता की झलक मिलती है क्योंकि रीतिकाल विलासिता प्रधान युग था और उसका केन्द्र बिन्दु थी नारी ।

चतुर्थ अध्याय में सांस्कृतिक दृष्टि से देव का नारी निरूपण महत्वपूर्ण है । सामाजिक दृष्टि से नायिकाओं का विभाजन शास्त्रीय विवेचन में गौण था । प्रेम के प्रसंगों, काम-चेष्टाओं, रतिक्रीड़ा मान विरह आदि के आधार पर ही नायिकाओं का निरूपण काव्य शास्त्रीय परम्परा की विशेषता रही।

पंचम अध्याय में रीतिकालीन कवियों ने अपनी रचनाओं में शृंगार रस की द्वारा विस्तार आलम्बन विभाव के अन्तर्गत नायिकाओं के भेदोपभेद को लेकर किया है । रीति शास्त्र

में प्रयुक्त नायिका भेद काल-क्रमानुसार सम्बद्ध ग्रन्थ प्रस्तुत किया गया है । कवियों ने नायिका भेद को लेकर सौन्दर्य चित्रण अतिरंजक रूप वर्णन, संयोगात्मक रूप स्फुरण, मनोवैज्ञानिक विभिन्न प्रभावात्मक रूप विश्लेषण, अन्तरंग अतिसूक्ष्म आलंकारिक प्रस्तुतीकरण तथा विषय-वस्तु के प्रति किस आत्म सचेतनता के उदाहरण दिये हैं वह किसी अन्य काल में नहीं प्राप्त होते ।

षष्ठम् अध्याय में नारी की मानसिकता का चित्रण है । नारी भगवान की अद्भुत कृति ही नहीं है वरन् मानवों की भी अद्भुत सृष्टि है । वैदिक काल के आरम्भिक विकास की दृष्टि से स्त्रियों को पुरुषों के समान ही अधिकार प्राप्त थे किन्तु धीरे-धीरे स्त्रियों की शारीरिक दुर्बलतायें ही उनके लिए अभिशाप बन गयीं । पुरुषों ने उनके अधिकारों को अपहृत करना प्रारम्भ कर दिया । सूत्रों ब्राह्मणों और स्मृतियों के युग में स्त्रियों का सम्मान भोग-विलास रूप तक ही रह गया था । स्पष्ट रूप से उनकी स्थिति अपेक्षाकृत गिरी हुई थी । समाज की परिस्थितियां देश के साहित्य को सदैव ही प्रभावित करती रही है । नारी की निन्दात्मक और प्रशंसात्मक दोनों दशाओं का ही चित्रण हुआ है ।

रीतिकाल में नारी को विलासिता का केन्द्र बनाकर सम्पूर्ण काव्य की रचना की गयी थी । नारी सौन्दर्य की भाव-भूमि विस्तृत है । नारी सौन्दर्य का केन्द्र बिन्दु है । नारी के अंग-प्रत्यंग के चित्रण में कवि ने ऐसी दृष्टि की थी जो नित नवीन गति से गतिमय होती गयी है । कवि की सौन्दर्य चेतना में दृष्टि इतनी रमी की वह प्रकृति सौन्दर्य की अपेक्षा नारी सौन्दर्य में अधिक डूबा । शृंगार रस की अभिव्यक्ति के लिए नारी के बाह्य और आन्तरिक सौन्दर्य का चित्रण किया गया है ।

सप्तम अध्याय में सूक्ष्मतापूर्ण चित्र उपस्थित किये गये हैं । रीतियुग में विविध ललित कलाओं में स्पर्धा चल रही थी । वास्तुकला, चित्रकला, संगीत कला और काव्य के सभी रचनाकार अपने आपको अग्रसर करने में तल्लीन थे । रीतिकाल के सभी रचनाकारों में यह बारीकी देखी जा सकती है । नायक-नायिका पर आठों पहरों का क्या प्रभाव होता है ? ये उनके अष्टयाम में उजागर है । अष्टयाम निरूपण में प्रत्येक दिन के प्रत्येक तिथि का प्रत्येक ऋतु का प्रभाव कवियों ने मनोवैज्ञानिक कौशल के साथ

प्रस्तुत किया है । रीतिकालीन कवियों का प्रमुख कथ्य वासनात्मकता मांसलता, अश्लीलता आदि के रूप में मिलता है तो इस प्रकार की वस्तुएं शृंगार के अनिवार्य उपकरण के रूप में इस युग में माने गये हैं । नारी के रूप सौन्दर्य की समग्रता देखी । शृंगारिक चेष्टाओं से उत्पन्न प्रतिक्रियाओं की अभिव्यक्ति शारीरिक चेष्टाओं अथवा मन:स्थितियों का निरूपण किया गया है ।

अष्टम अध्याय में शृंगार काव्य का अध्ययन अनुशीलन करना चाहिए । क्या अश्लील काव्य को बहिष्कृत करना चाहिए ? मुगलों के शासनकाल में नारियाँ दूसरी कोटि की मानी जाती थीं । शाहजहाँ का शासनकाल समाप्त होने के बाद औरंगजेब के बाद मोहम्मद शाह और बहादुर शाह जफर सभी कमजोर शासक सिद्ध हुए । अल्पायुलित शासक वर्ग वस्तुत: शासन के अयोग्य हो चुका था । रीतियुग में कवि कलाकार राजाओं के संरक्षण में रहते थे । केशवदास, चिन्तामणि, देव, मतिराम, भूषण, बिहारी, घनानन्द पद्माकर, बोधा ठाकुर आदि जितने भी हिन्दी के कवि हुए सभी ने प्रेम और शृंगार को अपना कथ्य बनाया । रीतिकालीन शृंगारिक वातावरण से अनुरंजित प्रतीत होती है । इस युग में सामान्यतया

महिलाओं का स्थान पुरुष की सम्पत्ति जैसा रहा है । वह जीवित व्यक्ति होकर भी क्रीड़ा की सामग्री समझी गयी । अश्लीलता की धारणा युग सापेक्ष्य है, एक ही प्रकार की वस्तु या व्यक्त रूप इस युग में अश्लील कहा जा सकता है और दूसरे युग में नहीं ।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि रीति-कालीन कवि श्रृंगार परक थे और उनकी श्रृंगारिकता में गंभीरता नहीं थी, रसिकता थी । इसी कारण कामभावना की अभिव्यक्ति इनके काव्य में हुई है और काव्य का मुख्य केन्द्र नारी थी । काम शब्द का अनेक अर्थों में प्रयोग हुआ है । इस काम के कारण ही एक वस्तु दूसरी पर आकृष्ट होकर संयोग करती है । इसीलिए काम को ही सृष्टि का अर्थात् दो वस्तुओं के मेल से नयी वस्तु की उत्पत्ति का कारण माना गया है । कहने का तात्पर्य यह है कि नारी जो विश्व की जन्मदात्री है, जिससे सम्पूर्ण मानवीय जाति चलायमान है वही रीतिकाल के काव्यों में आकर केवल शारीरिक सुख की साधन मात्र रह गयी ।

:*:*:*:*:*:*:*:

शोधकर्त्री,
रश्मि श्रीवास्तव.

" रीति काव्य में नारी का मानसिकता का चित्रण "
शोध-प्रबन्ध रश्मि श्रीवास्तव का मौलिक ग्रन्थ है और
इन्होंने मेरे निर्देशन में शोध कार्य किया ।

[signature]

(डा० जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव)

[illegible] में नारी की [illegible] का [illegible]

(समय सीमा सन् 1650 से 1850 ई० तक)

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
की
डी. फिल. उपाधि के लिये

शोध प्रबन्ध

।। शोध निर्देशक ।।
डॉ० जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव
एम ए., डी. फिल
अवकाश प्राप्त रीडर (हिन्दी विभाग)
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

।। शोध कर्ता ।।
रश्मि श्रीवास्तव
एम ए. (हिन्दी)
(इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद)

विषय-सूची

प्राक्कथन -

प्रथम - अध्याय :- रीतियुग में नारी की स्थिति {पृष्ठ संख्या 1-16}
{इतिहास के दर्पण से}

{क} पर्दा प्रथा

{ख} सती प्रथा

{ग} बाल विवाह

{घ} बहु-विवाह

{ङ} दहेज प्रथा

{च} दासी प्रथा

{छ} देव दासी प्रथा

{ज} देह-व्यापार

द्वितीय अध्याय:- रीतिकाल में नारी का चित्रण करने वाले प्रमुख कवि:-
{पृष्ठ संख्या} 18-44}

{क} केशव दास

{ख} मतिराम

{ग} चिन्तामणि

{घ} महाकवि देव

{ङ} बिहारी

{च} पद्माकर

{छ} रसलीन

{ज} आलम

तृतीय अध्याय:- महिला छवि निरूपित करने वाले रीतियुगीन प्रमुख कवि :- [45-71]

[क] बिहारी

[ख] केशवदास

[ग] देव

[घ] घनानन्द

[ङ] मतिराम

[च] पद्माकर

चतुर्थ अध्याय :- नारियों का वर्गीकरण :- [72-79]

[क] उच्चवर्ग

[ख] निम्न वर्ग

पंचम अध्याय:- नायिका भेद [80-112]

षष्ठ अध्याय :- नारी की मानसिकता का चित्रण [113-141]

[क] प्रत्यक्ष रूप में

[ख] अप्रत्यक्ष रूप में

सप्तम अध्याय:-7 सछविपूर्ण चित्र [142-161]

[मांसल और अवांछनीय छवियां]

अष्टम अध्याय :- श्रृंगार काव्य क्या अध्ययन अनुशीलन करना चाहिए ? क्या अवांछनीय काव्य बहिष्कृत होना चाहिए । कला दृष्टि/सामाजिक दृष्टि [162-187]

निष्कर्ष -

पुस्तक-नामानुक्रमणिका

प्राक्कथन

(रीतिकाल में नारी की मानसिकता का चित्रण)
शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके मुझे अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है
कि मेरा प्रयत्न आज सफल हुआ ।

रीतिकाल में नारी का स्वरूप निर्धारित करने के पहले नारी
के व्यक्तित्व का मूल्यांकन करना नितान्त अपेक्षित है ।

वैदिक काल के भारतीय समाज में नारी का सशक्त व्यक्तित्व
सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है । किन्तु उसकी दशा उत्तरोत्तर हीन होती
चली गयी समाज की परिस्थितियाँ देश के साहित्य को सदैव ही प्रभावि
करती रही हैं नारी का निन्दात्मक और प्रशंसात्मक दोनों दशाओं का
चित्रण हुआ है । रीतिकाल में नारी को विलासिता का केन्द्र बनाकर
सम्पूर्ण काव्य की रचना की गयी ।

रीतिकाल में नारी की स्थिति जैसी थी वैसी आज भी है
क्योंकि हमारी मानसिकता को केवल नारी के रूप में देखने की आदी
हो गयी । इस मानसिकता में नारी भोग्या है गृहिणी है घर की चहार-
दीवारी उसके लिए सुरक्षित स्थान है वह सदा पुरुष के संरक्षण में जीती
है । कहने को तो नाम हमारे पास अवश्य है मार्गी, दुर्गाबाई, लक्ष्मी-
बाई । किन्तु मानसिकता में नारी के दो ही रूप हैं वह कामिनी या
प्रेयसी है वह एक क्रय योग्य वस्तु है । जिसे जब चाहो अपमानित ,
आमंत्रित कर लो । मनुष्य अपने अन्तरम से नारी को सौन्दर्य की विभूति

से विभूषित करता है कविगण स्वर्णिम कल्पना के धागों से उसके लिये जाल सा बुनते है ।

शोध कार्य वैयक्तिक प्रयास नहीं है बल्कि सामूहिक यत्न है इसमें अनेकों का सहयोग होता है आरम्भ से लेकर अन्त तक निर्देशक का महत्वपूर्ण स्थान रहता है क्योंकि विषय चुनाव से लेकर प्रस्तुतीकरण तक शोध कर्ता को अनेकों कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इस दिशा में निर्देशक परमादरणीय डॉ जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव जी का विशेष सहयोग और दिशा निर्देशन मिलता रहा । उनके लिये धन्यवाद देकर मैं उनके श्रद्धा-संवलित स्नेह के मूल्य को कम नहीं करना चाहती ।

मैं विभागाध्यक्ष डॉ० राजेन्द्र कुमार जी तथा विभाग के अन्य प्रोफेसर के प्रति भी आभारी हूँ जिन्होंने निरन्तर अपना सहयोग और प्रोत्साहन दिया । साथ ही जिन विद्वानों के ग्रन्थों का उपयोग किया उनके नाम भी यथास्थान दे दिये गये है फिर भी भूल से यदि किसी का नाम छूट गया हो, तो मै उसके लिये क्षमा प्रार्थी हूँ ।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय के शोध संग्रहालय के प्रति, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के शोध संग्रहालय के प्रति विशेष रूप से आभार प्रकट करती हूँ । साथ ही भाई राजा के प्रति भी कृतज्ञ हूँ जिन्होंने इतने कम समय में शोध ग्रन्थ का टंकण कार्य किया ।

अन्त में अपने आदरणीय पिता जी डा० शिव प्रकाश जी तथा अपने आदरणीय ससुर जी श्री वीरेन्द्र प्रताप तथा बहन डॉ ममता तथा अपने पति श्री मनोज जी के प्रति भी विशेष रूप से कृतज्ञ हूँ जिनके आशीर्वाद तथा मंगलमयी प्रेरणा से मैं अपना शोधरूपी महायज्ञ पूरा कर सकी ।

रश्मि श्रीवास्तव

रश्मि श्रीवास्तव

प्रथम : अध्याय

प्रथम अध्याय-

रीतियुग में नारी की स्थिति

(इतिहास के दर्पण से)

(क) पर्दा प्रथा

(ख) सती प्रथा

(ग) बाल विवाह

(घ) बहु विवाह

(ङ) दहेज प्रथा

(च) दासी प्रथा

(छ) देवदासी प्रथा

(ज) देह-व्यापार

रीतियुग में नारी की स्थिति {इतिहास के दर्पण से}

रीति शब्द हिन्दी साहित्य के उत्तर मध्यकाल को उस प्रेरक एवं व्यापक प्रवृत्ति को व्यक्त करता है । जिसके भीतर कला-कौशल तथा शृंगार प्रियता आदि सबका किसी न किसी प्रकार अन्तर्भाव हो जाता है । और अन्तत: उसकी तुलना में वही अधिक महत्व पूर्ण प्रतीत होने लगता है कला काल कहने से कवियों की "रीतिकता" की उपेक्षा होती है, शृंगार काल कहने से वीर रस और राजप्रशंसा की ।" "रीतिकाल" कहने से प्राय: कोई भी महत्वपूर्ण वस्तुगत विशेषता उपेक्षित नहीं होती । और प्रमुख प्रवृत्ति सामने आ जाती है । यह धारणा वास्तविक रूप से सही है । {1}

सम्राट शाहजहाँ के शासन काल के उत्तरार्द्ध से हिन्दी साहित्य का तृतीय युग का आरंभ होता है । जिसे विद्वानो ने "रीतिकाल" की संज्ञा से विभूषित किया है । प्रदर्शन प्रधान, रीतिबद्ध काव्य शैली तथा काव्य में शृंगार परक जीवन दर्शन की अभिव्यक्ति का श्रेय से युग की प्रधान प्रदर्शन वृत्ति को है ।

शाहजहाँ के व्यक्तित्व के पक्ष में समसामयिक भारतीय और विदेशी इतिहासकारों मे बड़ा मतभेदहै । भारतीय इतिहासकारो के

{1} डा0 भागीरथ मिश्र - "रीतिकाव्य" शीर्षक लेख आलोचना इतिहास विशेषांक

{ पृष्ठ संख्या - {68} }

अनुसार वह इस्लाम के आदर्शों की दृष्टि से आदर्श शासक था। परन्तु बर्नियर और मनूची ने एक कामुक और विलासी व्यक्ति के रूप में चित्रित किया है। उनके अनुसार पाशविक ऐन्द्रिय भोग तो उसके जीवन का लक्ष्य था। हरम में लगने वाले रूप बाजार, राज्य के द्वारा अनुचारियों की व्यवस्था तथा अन्त: पुर में शत शत अंग सेविकाओं की उपस्थिति उसकी इसी प्रवृत्ति को परिचायक है।

शाहजहाँ के शासनकाल की परिस्थितियों का विवेचन करते हुए श्रीमती डा0 सावित्री सिन्हा ने लिखा है कि "शाहजहाँ की यलाम की महत्वाकांक्षा तथा दारा की सहिष्णुता के फलस्वरूप शाहजहाँ के शासन काल में भारतीय कला तथा साहित्य को संरक्षण प्राप्त हुआ। और मुगल दरबार में पोषित दरबारी काव्य का गहरा प्रभाव हिन्दी साहित्य पर पड़ने लगा। जीवन के व्यापके उपादानों को छोड़कर वह राजभक्ति और श्रृंगार वर्णन तक ही सीमित रह गया। पांडित्य प्रदर्शन के लिए समसमायिक भारतीय ईरानी काव्य परम्परा ने फारसी को प्राचीन परम्पराओं से प्रेरणा ग्रहण की है - - - - -।

फारसी काव्य की विलासमयी नायिकाओं की तुलना में नायिका-भेद की श्रेणियों में वृद्धि नारी-सौन्दर्य को ही रखा जा सकता था।" §1§

---

§1§ हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास §षष्ठ भाग§
सम्पादक - डा0 नगेन्द्र

जहाँ मुगल दरबार में भारतीय ईरानी काव्य परम्परा को पृश्रय मिला, वहाँ राजस्थान के नरेशों तथा सामन्तों की छत्रछाया में हिन्दी कविता का दरबारी रूप बनाया ओरछा, कोटा, बूंदी, जयपुर, जोधपुर और यहाँ तक कि महाराष्ट्र के राजदरबारों में ही वही पृदर्शन पृधान और श्रृंगारपरक जीवन दर्शन की अभिव्यक्ति में काव्यधारा चलती रही ।

मुगल आक्रमण-कारियों के भय से वृन्दावन और गोवर्धन के मन्दिर खाली हो गये । सिसोदिया वंश के राजासिंह की कृपा से सिंहोर में नाथद्वारा की स्थापना हुयी और राजस्थान वैष्णव धर्म का केन्द्र बन गया । औरंगजेब के बाद हिन्दू राजे और भी अधिक विलासी बन गये । इन कारणों से काव्य में मौलिकता और नवीन उद्भावनाओं का अभाव हो गया इस स्थिति के निष्कर्ष रूप श्रीमती डा0 सावित्री सिन्हा ने ठीक ही लिखा है कि, "विवेक हीन विलास इस युग के जीवन का पृधान स्वर हो गया था । यही कारण है कि राजाश्रित कवियों की वाणी वैभव और विलास की मदिरा पीकर बेसुध हो उठी । "§1§

---

§1§ हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास ,§षष्ठभाग§

सम्पादक - डा0 नागेन्द्र

पृष्ठ संख्या -11

शाही दरबार में प्रश्रय मिलने से अपने आश्रयदाताओं को प्रसन्न करने के लिए कविगण अपनी योग्यता और परिश्रम का प्रदर्शन करें यह स्वाभाविक था, उर्दू शायरों ने अपनी काव्य कुशलता और लगन की परिचय देने के लिए कठिन शब्दों में रचनायें की ।

मुगल शासकों ने कला के प्रत्येक पक्ष को प्रश्रय एवं प्रोत्साहन प्रदान किया उनके दरबार में कलाकारों कोआश्रय मिलता था । कवियों का विशेष सम्मान था कविवर बिहारी को जयपुर के राजा प्रत्येक दोहे पर अशर्फी पुरस्कार स्वरूप देते थे ।

शृंगार के वर्णन को बहुतेरे कवियों ने अश्लीलता की सीमा तक पहुँचा दिया था । दूसरा कारण जनता की रूचि नहीं आश्रयदाता महाराजाओं की रूचि थी । जिनके लिए वीरता और कर्मण्यता का जीवन बहुत कम रह गया था ।" §1§

---

§1§ हिन्दी साहित्य का इतिहास

लेखक -पंडित रामचन्द्र शुक्ल

पृष्ठ संख्या - 291

रीतियुग में स्त्रियों की दशा

इस्लाम में मानव समानता को स्वीकार किया गया है, तथा सभी मुसलमानों को समान अधिकार दिये गये हैं । मोहम्मद साहब ने स्त्री एवं पुरुषों को बराबर स्वीकार किया है । उन्हें अपने पैतृक सम्पत्ति में भी एक निश्चित अधिकार प्रदान किया गया है । अरब में इस्लाम के उदय समय स्त्रियों की बड़ी शोचनीय दशा थी । परिवार में पुत्री का जन्म अशुभ माना जाता था, कुछ लोग पुत्रियों की हत्या भी कर देते थे । स्त्रियों को पुरुषों के अधीन दासी अथवा सेविका के रूप मे स्वीकार किया गया था । परन्तु पगम्बर साहब ने स्त्रियों के प्रति अरबों की दुर्व्यवहार को घोर निन्दा और कहा कि किसी प्रकार भी पुरुषों के निकृष्ट नहीं है । उनके अधिकार भी समान है । परन्तु पैगम्बर साहब के पश्चात पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों के अधिकारों में कुछ कमी आयी । मुसलमानों के आगमन से पूर्व भारतीय समाज मे पुरुषों की तुलना में स्त्रियों के अधिकार सीमित थे । वे जन्म से लेकर मृत्यु तक पुरुषों की संरक्षता में रहती थी, पत्नी के रूप में पति की संरक्षता में, पुत्री के रूप में पिता की संरक्षता और विधवा के रूप में पुत्र की संरक्षता में रहती थी । हिन्दू समाज में स्त्री का मुख्य कर्तव्य शिशु को जन्म देना और यदि पुत्री का जन्म होता था ।

{1} एल0सी0नन्द - वीमेन इन देहली सल्तनत

तो वह बहुत अशुभ समझा जाता था । हिन्दू समाज में स्त्रियों को पशुवत् समझा जाता था ।

गोस्वामी तुलसी दास लिखते हैं :-

"ढोल गँवार शूद्र पशु नारी ।

ये सब ताड़न के अधिकारी ।"

हिन्दू स्त्रियों की स्थिति ने मुस्लिम समाज को स्त्रियों को भी प्रभावित किया । मध्यकालीन भारतीय समाज में स्त्रियों के अधिकारों एवं स्तर में गिरावट आई । तथा उन्हें पुरुषों पर आश्रित स्वीकार किया जाने लगा । मुस्लिम समाज में विभिन्न वर्गों की स्त्रियों की दशा में भिन्नता थी । शासक वर्ग की स्त्रियों की दशा बेहतर थी । मुस्लिम शासकों ने राजमहल में हरम की व्यवस्था की थी । जहाँ उनकी पत्नियाँ, पुत्रियाँ राजपरिवार की महिलायें तथा उपपत्नियाँ निवास करती थी । उनकी सेवा में अनेक दासियाँ एवं महिला सेविकायें होती थी । साधारणत: शासक की माँ को हरम की प्रथम महिला का सम्मान प्राप्त होता था । तथा उसके पश्चात् शासक की प्रथम पत्नी का विशेष स्थान

उन्हें उपाधियां व्यक्तिगत जागीरें नकद धनराशि एवं पारितोषित भी प्रदान किया जाता था उनके मनोरंजन के लिए गायिकाएं नर्तकियां तथा विभिन्न कलाओं में निपुण महिलाएं भी रहती थी । शासक वर्ग की महिलाओं ने राजनीति को भी प्रभावित किया । सुल्तान इल्तुमिश की पत्नी शाह तुर्कान ने रजिया को उत्तराधिकार को ठुकराते हुए उमरा के सहयोग से अपने पुत्र रुक्नुद्दीन फिरोज के सिंहासनारोहण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया । इब्नेबतुता के अनुसार मोहम्मद तुगलक की माँ मखदूम-ए-जहाँ संतो एवं उलेमा का बहुत सम्मान करती थी ।

मुगल हराम को महिलाएं समकालीन राजनीति एवं संस्कृति के विभिन्न क्षेत्रों में अपना विशेष योगदान दिया हमायूं की पत्नी हमीदा बानो बेगम एक बुद्धिमती महिला थी । जिसने अकबर की पत्नी सलीमा बेगम एक दूरदर्शी एवं संतुलित महिला थी जहाँगीर के शासन काल की राजनीति में नूरजहाँ की विशेष भूमिका रही । शाहजहाँ की प्रमुख सलाहकार उनकी पत्नी मुमताज महल थी । तथा उनकी मृत्यु के बाद उनका स्थान उनकी पुत्री जहाँआरा ने लिया जहाँआरा एक उच्चकोटि की कवियत्री थी ।

उच्च उमरा की गणना भी शासक वर्ग में की

जाती थी, जो सामाजिक एवं व्यक्तिगत जीवन में शासकों का अनुकरण करते थे शाही हरम की भाँति उनके भी हरम होते थे। जहाँ उनकी पत्नियाँ, पुत्रियाँ उपपत्नियाँ तथा अन्य महिलायें निवास करती थी। इस प्रकार उनके हरम में भी दासियाँ एवं सेविकायें होती थी। उनकी स्त्रियों के मनोरंजन के लिए गायिकाओं एवं नर्तकियाँ हुआ करती थी। इस प्रकार उच्च उमरा परिवार की स्त्रियों को भी सभी सुख सुविधायें प्राप्त थी। हिन्दू शासक वर्ग में स्वायत्त शासक जमींदार एवं उच्च उमरा सम्मिलित थे। इस वर्ग की स्त्रियों का जीवन मुस्लिम वर्ग की स्त्रियों की भाँति ही सुखमय एवं वैभवपूर्ण था।

मध्यम वर्ग के अन्तर्गत शिक्षक हकीम ज्योति षी साधारण अमीर मध्यस्थ जमींदार व्यापारी, वेतन भोगी राजकीय कर्मचारी आदि सम्मिलित थे। उच्च वर्ग की तुलना में मध्यम वर्ग कम सम्पन्न था परन्तु स्त्रियों की दशा लगभग समान थी तथा वे सुख सुविधाओं का उपभोग करती थी।

निम्नवर्ग में कृषक शिल्पकार एवं छोटे व्यवसायी वर्ग की स्त्रियाँ आती है इस वर्ग में मुस्लिम एवं हिन्दू स्त्रियाँ अपने

पति के व्यवसाय में पूर्ण सहयोग देती थी । ये घर एवं बाहर काफी परिश्रम करना पड़ता था ये उच्च एवं मध्यम वर्ग के परिवार में सेवा करके अपनी जीवीकोपार्जन करती थी ।

पर्दाप्रथा:-

मुसलमानों के आगमन से पूर्व भारतवर्ष में पर्दा प्रथा का अभाव था । हिन्दू स्त्रियाँ केवल घूंघट के द्वारा ही अपना मुख ढका करती थीं । किन्तु मुसलमानो के आगमन के पश्चात् उनकी संस्कृति के प्रभाव के फल स्वरूप पर्दा प्रथा पर विशेष बल मिला और मुसलमानों की भाँति हिन्दुओं में भी पर्दा पहले की अपेक्षा कठोर हो गयी । मुस्लिम शासकों ने भी पर्दा प्रथा के प्रचार सहयोग प्रदान किया । सुल्तान फिरोजशाह तुगलक ने पर्दा प्रथा के प्रचार के लिए राज्य की ओर से प्रोत्साहन प्रदान किया था वह सर्वप्रथम शासक था जिसने मुस्लिम औरतों के दिल्ली के बाहर स्थित मजारो पर जाने प्रतिबन्ध लगा दिया था । अतः अमीरों की स्त्रियों ने डोलियों तथा पालकियो में निकलना आरंभ कर दिया था । निर्धन वर्ग की स्त्रियों में बुरके का प्रचार बढ़ने लगा ।

सम्राट अकबर जो कि बहुत उदार प्रवृत्ति का था उसने भी पर्दा प्रथा को प्रोत्साहन किया था । अकबर के समकालीन इतिहास कार अब्दुल कादिर बदायूँनी के अनुसार - " यदि कोई युवती बिना बुरके अथवा बिना पर्दा किये हुए, सड़कों एवं बाजारों में घूमती हुयी पाई जाती थी तो वह वेश्या के पेशे को ग्रहण कर लिया करती थी ।" §1§ इसके अतिरिक्त उच्च वर्ग के हिन्दुओं ने भी अपनी रक्त शुद्धता को बनाये रखने के लिए पर्दा प्रथा का कठोरता से पालन किया ।

मध्यकालिन भारतीय समाज में पर्दा प्रथा इस सीमा तक पहुँच चुकी थी, कि उच्चवर्ग की बीमार स्त्रियों को हकीम अथवा वैद्य भी नहीं देख सकते थे उनकी बीमारी को जानने के लिए उनके शरीर से एक कपड़े के टुकड़े को स्पर्श करा कर दे दिया जाता था तथा उस कपड़े को सूंघकर हकीम बीमारी के बारे में जान लेते थे । और इलाज करते थे । यदि कोई स्त्री पर्दा-प्रथा का पूरी तरह से पालन नहीं करती थी । तो उसका पति उसे तलाक दे देता था ।

---

§1§ ए०एस० अल्टेकर - "दि पोजीशन आँव वीमेन इन हिन्दू पृष्ठसंख्या- 206 सिविलाइजेशन

सती प्रथा

हिन्दू समाज में पति की मृत्यु के पश्चात् उस स्त्री के सिर के बाल मुड़वा दिये जाते थे और उसके श्रृंगार पर भी रोक थी। अल्बेरूनी के अनुसार, - "एक हिन्दू विधवा स्त्री को दो मार्गों में एक का चुनाव करना पड़ता था। एक तो यह है कि वह जीवनपर्यन्त विधवा रहे और दूसरे यह कि वह अपने पति की चिता के साथ जलकर सती हो जाये। उच्चवर्ग तथा विशेषकर राजपूतों में यह प्रथा अधिक प्रचलित थी। विधवा स्त्री पति के मृतक शरीर के साथ अकेले भी सती हो जाया करती थी। मृतक व्यक्ति को एक से अधिक पत्नी होने की स्थिति में ज्येष्ठ पत्नी पति के शरीर के साथ तथा अन्य पत्नियाँ अलग-अलग जला करती थीं दिल्ली के सुल्तानों ने सती प्रथा को रोकने के लिए अत्यधिक प्रयास किया। प्रसिद्ध यात्री इब्नेबतूता लिखते हैं कि सतीत्व ग्रहण करने के लिए राज्य स्वीकृति लेना आवश्यक था।

मुगल शासकों ने भी इसको समाज से दूर करने के लिए इस पर प्रतिबन्ध लगाये थे ।

बाल विवाह-

मध्यकालीन भारतीय समाज में बाल विवाह का प्रचलन था । हिन्दू एवं मुस्लिम दोनों समाजों में ही बालकों एवं बालिकाओं का शीघ्रातिशीघ्र विवाह सम्पन्न कर दिया जाता था । बाल विवाह मुगल कालीन हिन्दू समाज की एक प्रमुख विशेषता थी । सामान्यत: बालिकाओं का विवाह नौ अथवा दस वर्ष की अवस्था में सम्पन्न कर दिया जाता था । कभी-कभी उन्हें ठीक से बोलना भी नहीं आता था कि उनका विवाह कर दिया जाता था अकबर का दरबारी इतिहासकार अबुल फजल लिखते है -- कि मध्यकालीन भारत में सर्वप्रथम अकबर ने विवाह के लिए लड़के की आयु सोलह एवं लड़की की चौदह वर्ष निर्धारित की थी ।

बहु विवाह-

बहु विवाह की प्रथा हिन्दू और मुस्लिम समाज दोनों ही वर्गों में प्रचलित थी मुसलमानों में यह वैधानिक था और हिन्दुओं में इस्लाम का प्रभाव था । इस प्रथा को प्रभाव उच्च वर्ग के समाज में मुख्यत: था । मध्यम एवं निम्न वर्ग के लोग अधिकांशत: एक ही विवाह करते थे ।

शासक वर्ग अपनी पत्नियों को श्रेणी में विभाजित करते थे प्रथम श्रेणी में राजमहिषी या पटरानी या मुख्य रानी का स्थान रहता था । द्वितीय श्रेणी में अन्य रानियाँ आती थी । तीसरे श्रेणी मे रखैल आती थी और चौथे श्रेणी में दासियाँ आती थी । अकबर ने अपने शासन काल के अन्तिम वर्षों मे बहुविवाह पर रोक लगाई परन्तु कार्यान्वित नहीं किया जा सका ।

दहेज प्रथा ।

समाज में दहेज प्रथा का प्रचलन तुर्कों के आगमन से पूर्व हो चुका था । विवाह के अवसर पर वधू पक्ष की ओर से वर को दहेज के रूप में बहुमूल्य वस्त्र आभूषण के रूप में दिए

जाते थे । बर्तन हाथी घोड़े सेविकायें तथा अन्य विलासिता की वस्तुएं दी जाती थी । यह प्रथा अधिकांशतः उच्च वर्ग में प्रचलित थी । दहेज की मात्रा वधू पक्ष की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करती थी । कुछ प्रदेशों में वधू पक्ष की ओर से दहेज लिया जाता था परन्तु यह प्रथा विशेषकर वर्तमान उत्तर प्रदेश एवं बिहार के कुछ क्षेत्रों के निम्नवर्ग में प्रचलित था । इसका कारण यह था कि धनी बूढ़े लोग कम उम्र की लड़की से विवाह करना चाहते थे ।" इस विषय में वधू क्रय की सूचना भी उपलब्ध होती है और इसके अतिरिक्त बंगाल में वधू की छोटी बहन को भी दहेज में देने की एक विचित्र प्रथा प्रचलित थी ।" {1}

दासी प्रथा -

मध्यकालीन भारतीय समाज में दासी प्रथा प्रचलित थी । हिन्दू एवं मुसलमानों को दासियाँ रखने का बहुत शौक था । विजय नगर के हिन्दू राज्य में इस प्रथा को राजकीय मान्यता प्राप्त थी । सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी ने बाजार नियंत्रण सम्बन्धी नियम कार्यान्वित करते समय रंग एवं रूप के आधार पर दासियों का भी मूल्य निर्धारित कर दिया

{1} वीमन इन मुगल इण्डिया
लेखिका - रेखा मिश्रा
पृष्ठ संख्या - 226

था मुगल बादशाहों के हरम में भी दासियां हुआ करती थी । इसके अतिरिक्त अमीरों के हरम एवं महलो में भी दासियां होती थी । दासियों को उपहार स्वरूप तथा वधू के साथ दहेज के रूप में भी भेंट भी किया जाता था ।

देवदासी

प्राचीन काल से ही हिन्दू मन्दिरो में देवदासी प्रथा प्रचलित थी हिन्दू परिवार के लोग अपने आराध्य देवता की सेवा करने के लिए अपनी पुत्रियों को मन्दिर में दे दिया करते थे यह प्रथा दक्षिण भारत में विशेष रूप से प्रचलित थी जब मन्दिरों में सम्पन्नता में वृद्धि हुयी तो पुरोहितो में संसारिक भोग विलास के प्रति सम्मोहन बढ़ा तथा वहाँ का वातावरण दूषित हो गया । मन्दिरों के पुरोहितो ने देवदासियों का यौन शोषण आरंभ कर दिया । इस प्रकार देवदासी प्रथा जो अतीत में गौरव की बात समझी जाती था । शनै-शनै दूषित हो गयी तथा इस प्रथा ने छद्म वैश्यावृत्ति का स्वरूप ग्रहण कर लिया ।

देह-व्यापार

इस कुरीति का प्रचलन भारत में प्राचीन काल से चला

आ रहा था । इसके द्वारा राज्य की आय में वृद्धि होती थी । जिसके कारण इस संस्था को बन्द नहीं किया गया था वेश्याओं को नृत्य एवं संगीत से भी घनिष्ठसम्बन्ध था जो कि आनंद एवं मनोरंजन का एक प्रमुख साधन था सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी ने "वेश्यावृत्ति" को अन्त कर दिया तथा नगर की सभी वेश्याओं को एक निर्धारित समय के भीतर विवाह करने को बाध्य किया था । अकबर अकबर ने भी वेश्याओं के रहने के लिए शहर से बाहर स्थान प्रदान किया था । जिसे "शैतानपुरी" का नाम दिया गया था ।

द्वितीय : अध्याय

रीतिकाल में नारी का चित्रण करने वाले प्रमुख कवि :-

(1) केशवदास

(2) मतिराम

(3) चिन्तामणि

(4) महाकवि देव

(5) बिहारी

(6) पद्माकर

(7) रसलीन

(8) आलम

रीतिकाल में नारी का चित्रण:-

हिन्दी साहित्य में जिस समय रीतिग्रन्थों का निर्माण हुआ उस समय अनेक संस्कृत के सम्प्रदाय बन चुके थे । हिन्दी का कवि समाज इस अभाव को अनुभव कर रहा था, जिस प्रकार का वातावरण भक्तिकाल के प्रादुर्भाव के कारण उसे न मिल सका । अधिकतर रीति-कवि दरबारी थे, इस कारण अपने आश्रयदाताओं को प्रसन्न करने के लिए कविता लिखते थे मुगल शहंशाहों के दरबारों में कवियों को श्रृंगार या नखशिख वर्णन का रोमानी, वासनामूलक चित्र प्रस्तुत करते थे ।

रीतिकालीन समाज "काम" प्रधान था, और काम की प्रधानता केवल उच्चवर्ग तक ही सीमित नहीं थी । निम्नवर्ग की भी संचालिक । शक्ति काम में ही सन्निहित थी । इस काल में सभी लोग नारी के वश में हो जाते थे नारी कामान्धता में परपुरुष गामिनी हो जाती थी और पुरुष परस्त्री गामी हो जाते थे ।

नारी वासना को उद्दीप्त भी करती है और उसकी तृप्ति भी उसी के द्वारा होती है ।

रीतिकाल के कवियों ने अपनी रचनाओं को अन्य रसों की अपेक्षा श्रृंगार का वर्णन किया है । इसका प्रमुख कारण उस समय की सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियाँ थी इस सम्बन्ध में डॉ0वर्मा ने ठीक ही लिखा है -- "सामन्ती जीवन पद्धति आश्रय दाताओं का सब कुछ भूल कर कंचन, कामिनी और कामदेव के सेवन में लिप्त रहना तथा प्रणय और आसक्ति की सुरा पीकर मदहोश रहना एवं इसी मनोवृत्ति तथा वातावरण के अनुकूल कविता - कामिनी का नृत्य करना ही वह कारण था, जिससे प्रेरित होकर रीतिबद्ध कवियों ने श्रृंगारपरक साहित्य की सरजना की है ।" इसी करण इस काल के अधिकांश कवियों का ध्येय ऐहिक और नर-नारी के सम्बन्धों का विस्तार पूर्वक वर्णन मिलता है इस काल के नायक-नायिका एक-दूसरे से मिलने की तड़प और संकोच तथा लोक बाधाओं के बावजूद भी प्रणयमार्ग पर तत्पर रहते थे

----

§1§ श्रृंगार कालीन काव्य का वर्गीकरण ।
डॉ0 वर्मा

सभी रीति-केलि की दशाओं का प्रतिबिम्ब स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है । यौवनागमन सौन्दर्य, प्रथादप्रेम, प्रियतम का प्रेम, अभिलाषा ईर्ष्या आदि का चित्र हृदयग्राही है ।

रीतिकाल में नारी सौन्दर्य का केन्द्र बिन्दु थी नारी के अंग-प्रत्यंग के चित्रण में कवि ने ऐसी सृष्टि की है जो नित नवीन गति में गतिमय होती गई है । कवियों ने सौन्दर्य में प्रकृति की सुन्दरता की अपेक्षा नारी की सुन्दरता की ओर अधिक झुका और श्रृंगार रस की अभिव्यक्ति के लिए नारी के बाह्य और आन्तरिक सौन्दर्य का चित्रण किया ।

रीतिकाव्य परम्परा में नारी का चित्रण करने वाले प्रमुख कवि:-

आचार्य केशव - [जन्म सम्वत् 1612]

केशव रीतिकाल में प्रथम आचार्य स्वीकार किये जाते हैं । केशवदास के निम्न लिखित ग्रन्थ हैं -

रसिक प्रिया, रतन बावणी, आनंदलहरी, नखशिख, कृष्णलीला, रसललित, कविप्रिया, अमीघूंट, रामालंकृत मंजरी, रामचन्द्रिका ।

केशवदास के आश्रयदाता इन्द्रजीत सिंह के लिए "रसिकप्रिया" से श्रृंगार रसपूर्ण ग्रन्थ की रचना की इसमें इन्होंने नौं रसों का कथन करके श्रृंगार को नायकत्व प्रदान किया है । रसिकप्रिया में श्रृंगार रस की महत्ता दिखलाकर ग्रन्थ के अन्त तक श्रृंगार का ही वर्णन करते चले जाते हैं श्रृंगार के संयोग एवं विप्रलम्भ पक्ष, उनके प्रकाश और प्रच्छन्न भेद, आलम्बन के अन्तर्गत नायक-नायिका विस्तृत भेदोपभेद प्रिय दर्शन के विविध रूप, उद्दीप्त विभाव अनुभाव मान और मानमोचन के विस्तृत विवरण नायिका का विभिन्न दशाएं उसकी दूतिकाओं आदि का वर्णन किया है काव्य सौन्दर्य की

दृष्टि से ये रचना अत्यन्त श्रेष्ठ है ।

उदाहरण :-

तोहैं दिखाय दिखाय सखी,
इक बारक कानन आनि बसाये ।
जानै को केसव कानन है कित,
है, हरि नैनन मांझ सिधाये ।।
लाज के साल धरेई रहे तब,
नैनन लै मन ही सौं मिलाये ।
कैसी करौं अब क्यौं निकसैं को,
हेरई हेरे हिय में हरि आये ।।

रसिक प्रिया और कविप्रिया का वर्ण्यविषय मुख्यतः श्रृंगार ही है इसमें नारी के सौन्दर्य का वर्णन किया गया हैं ।

नायिका का रूप वर्णन -

को है दमयन्ती इन्दुमती रतिराति दिन,
होहि न छबीली छनछबि जौं सिंगारिये ।
केसव लजात जलजात जातिवेद ओप,
जातरूप बापुरो बिरूप सो निहारियै ।
मदन निरूप निरूपम सौं निरूप भयो,
चंदु बहुरूप अनुरूप कै बिचारियै ।
सीता जी के रूप पर देवता कुरूप को हैं,
रूप ही के रूपक तौ-तौ वारि-वारि डारियै ।

{1} केशव - रसिकप्रिया

"नखशिख" वर्णन-रीति पर लिखी गयी एक छोटी सी कृति है जिसमें कवि की परम्परा विहित-रीति पर राधिका जी के नखशिख तक प्रत्येक अंग का वर्णन किया है काव्य की दृष्टि से यह ग्रन्थ प्रौढ़ और ऊँचे स्तर का है ।

कपोल का वर्णन -

गोरे गोरे गाल अति कमल अमोल तेरे,

ललित कपोल किंधौं मैन के मुकुट हैं ।

इस प्रकार केशव का बहुविध काव्य अपनी भावगत रमणीयता कलात्मक उत्कर्ष और विचारगत गंभीरता के कारण हिन्दी साहित्य के काव्याकाश के ज्योतिर्मय नक्षत्रों में सूर और तुलसी के बाद केशव का नाम लिया जाता है और निश्चय ही वे इस पद के अधिकारी हैं

केशव वस्तुत: अलंकार प्रिय कवि हैं उन्होंने ऊहात्मक अप्रस्तुतों को योजना में कवि की चेष्टा संवेदना को जागृत करने के स्थान पर बुद्धि को चमत्कृत करके अथवा वस्तु के प्रति नूतन दृष्टिकोण प्रस्तुत करने की होती है यह लोक सीमा अथवा मर्यादा का अतिक्रमण कर जाने के कारण अनेक स्थलों पर हास्यास्पद और मनोरंजक बन जाती है ।

पिउ पिउ रटत पियत चातकी ज्यौं,

बूँद पियैं बकई ज्यों चुपकै रहति है ।

हरनी ज्यौं हेरिरति न केशरि के कानन को,

केशव कुँवर कान्ह बिरह तिहारे ऐसी

सुरति न राधिका कीमूरति गहति है ।

{1} केशव - रीति श्रृंगार

पृष्ठ संख्या - 20

इस उदाहरण में नायिका का साम्य, भ्रमरी हंसिनी चातकी, हारिनी से किया गया है, वह अत्यन्त सूक्ष्म है कवि की दृष्टि इन स्थलों में विरहिणी की व्याकुलता चित्रित करने के स्थान पर अनेक अप्रस्तुतों की योजना की अपनी क्षमता के प्रदर्शन है ।

मतिराम - [जन्म सं0 1674 : मृत्यु सं0 1719]

रीतिकवियों में इनका स्थान द्वितीय श्रेणी का है मतिराम का जन्म कानपुर जिले के तिकमापुर ग्राम में सं0 1674 में हुआ था मतिराम सम्पूर्ण ब्रजभाषा काव्य के महत्तम कवियों में से है ।

इनकी प्रमाणिक रचनायें निम्न है :-

फूलमंजरी, ललित ललाम, मतिराम सत्तसई अलंकार पंचाशिका वृत्त कौमुदी रसराज ।

इन ग्रन्थो में सर्वाधिक नायिका प्रसिद्ध ग्रन्थ रसराज है इसमें नायिका या नारी को देखकर चित्त के भीतर रसाभाव की उत्पत्ति होती है ।

कुन्दन को रंग फीको,लगै, झलकै अति अंगन चारु गुराई
आँखिन में अलसानि चितौन में मंजु विलासन की सरसाई ।
को बिन मोल बिकात नहीं, मतिराम लहै मुसकनि मिठाई
ज्यौं-ज्यौं निहारिये नेरे है, नैननि त्यौं-त्यौं खरी निकारै सी

---

[1] मतिराम - रसराज
पृष्ठ सं0 3, दोहा नं0 6

मतिराम ने नारी की वियोग की नौ अवस्थाओं का वर्णन किया है नारी की उन्माद दशा का उदाहरण है -

जा दिन ते मतिराम कहैं, मुसुकात कहूँ निरखे नंद लालहिं ।
ता दिन ते छिन-छिन हीन, बिथा बहु बाढ़ी वियोग की बाढ़हिं ।
मोछति है अर सौं मिलि है गीर, सुझति स्याम शरीर गुपालहिं ।
भोरी भई है मयंक मुखी, भुज भेटहिं है भरि अंक तमालहिं ।

मतिराम ने नारी के शरीर सौन्दर्य पर विशेष स्थान दिया है नखशिख का वर्णन करते हुए नायिका के रम्य और मादक अवयवों का मादकमोहन और वसनोद्दीपक अंगचित्रण किया है ।

रसराज श्रृंगार रस निरूपण तथा नायिका । भेद विवेचन का अत्यन्त लोकप्रिय ग्रन्थ रहा है और समूचे रीतियुग में सरस उदाहरणों की बहुलता के कारण यह ग्रन्थ अत्यधिक प्रसिद्ध रहा ।

रसराज में समस्त रसों का वर्णन न होकर केवल श्रृंगार रस ही वर्णित हुआ है श्रृंगार समस्त रसों का राजा मान्य रहा है ।

चिन्तामणि - {जन्म सं0 1666 - मृत्यु सं0 1700}

चिन्तामणि त्रिपाठी टिक्तापुर जिला कानपुर के रहने वाले कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे ।

चिन्तामणि के निम्न मौलिक ग्रन्थ हैं -

रामायण छंद विचार पिंगल काव्य प्रकाश, काव्य विवेक, कविकल्प तरु कवित्त विचार, गीत गोविन्द संगीत चिन्तामणि रसविलास रसमंजरी ।

चिन्तामणि मूलत: रसवादी कवि थे, इसलिए उनकी काव्य कृतियों में रस विशेषत: शृंगार रस का पूर्णपरिपाक देखने को उपलब्ध हो जाता है नारी के अंग प्रत्यंग के शोभा का वर्णन बहुत रस लेकर किया गया है नख से शिख तक की रूप माधुरी को अलंकृत और मनोरम वर्णन अत्यन्त हृदयग्राही है ।

नारी के सौन्दर्य का वर्णन -

कमल कपोल प्रति विंवन सहित मीन, जटित तांतक चीर चारु छवि धाम है ।

चिन्तामणि बदन मयंक रथ रवि रुचि मीननेह मंजुल है महारथी काम है ।।

सारी जरतारी हेम पंजार में खंजमुख, सुखमा सरोवर है सरसिज स्याम है ।

चाहे नैन-नैन जाने जैसे चैन होवे वैन, कहाँ लौं कहेंगें जैसे नैन अभिराम है ।।

महाकवि देव -§जन्म सं० 1730, मृत्यु सं० 1827§

देव उच्चकोटि के श्रृंगार कवि है इनका पूरा नाम देवदत्त था । इनका जन्म इटावा जिले के पंसारी तोला बल्लाल पुरा में हुआ था । इनके पिता का नाम पं० बिहारी लाल देव था ।

देव भी काव्य में रीतिपरम्परा की सारी सीमायें होते हुए भी एक ऐसी अन्तर्दृष्टि मिलती है जो जीवन को समग्र रूप में देखती हुयी भावनाओं का उदात्त धरातल पर स्थापित करती है उनकी कल्पना विशद् सुकुमार नयी रूप योजनाओं से युक्त कहीं कहीं विराटता का स्पर्श करती हुयी सी प्रतीत होती है देव के हृदय में अपने युग की परिस्थितियों से सूक्ष्म असंतोष की भावना विकसित होती रही जो वैभव विलास की तीव्र प्रतिक्रिया से संयुक्त होकर विराग के रूप में व्यक्त हुयी है ।

देव की प्रमाणिक रचनायें :-

भाव विलास, जाति विलास अष्टयामी भवानी विलास, प्रेमतरंग, कुशल विलास, देवचरित, रस विलास, प्रेमचन्द्रिका, सुजान विनोद , काव्य रसायन, सुखसागर तरंग राग रत्नाकर, जगदर्शन पचीसी, प्रेम पचीसी, देवमाया प्रपंच ।

देव मूलतः प्रेम और श्रृंगार के कवि है । देव ने संयोग श्रृंगार के अन्तर्गत नारी का रूप वर्णन मिलन शारीरिक सुख विनोद हाव-भाव चेष्टाओं और रति क्रीड़ाओं का वर्णन देव ने बड़े ही कौशल के साथ किया हैं ।

देव ने सौन्दर्य वर्णन में कहीं-कहीं पर ऐन्द्रियता भी उभर आयी हैं । इसमें नायिका के विभिन्न अंगो का चित्र उपस्थित किया है ।

"कंचुकि में चुपरो करि चोवा,
    लगाय लियो उर सो अभिलाख्यो ।
कै मखतूल गुने गहने रस,
    मूरति बत सिंगार के चाख्यौ ।
सांवरे लाल को सांवरे रूप,
    मे नैनन मे कजरा करि राख्यौ ।"

देव ने जहाँ नारी के सौन्दर्य का वर्ण्य किया हैं और संयोग के वर्णनो में जहाँ मिलन के चित्रणों में भावना द्वारा मांसलता में रंग भर दिया हैं वहाँ परिहास वर्णन भी किया है देव ने संयोग के साथ ही साथ वियोग का भी मनोहारी चित्रण किया है नारी विरह मे जलती हुयी मरणावस्था तक पहुंच गयी है ।

इस सवैया में नारी की विरह दशा का वर्णन किया है -

"सांसन की सांस समीर गयो,

अरु आंसुन ही सब नीर गयो ढुरि,

तेज गयो गुन लै अपनों,

अरु भूमि गई तन की तनुता करि,

जीव रह्यौ मिलिबेई को आस

कि आंसुहु पास आकाश रह्यो भरि ।"

बिहारी -§समय सं0 1652§

बिहारी रीतिकाल के सर्वाधिक ख्याति प्राप्त प्रतिनिधि कवि है इनका जन्म ग्वालियर के समीप बसुधा गोविन्द पुर नामक स्थान में हुआ था ।

बिहारी सत्तसई श्रृंगार रस प्रधान रचना है इसमें सात सौ से कुछ अधिक स्फुट मुक्तकों का संकलन है बिहारी सत्तसई में श्रृंगार रस को उदात्त तथा परिष्कृत भावना के क्षेत्र में सभी प्रकार के नायक-नायिका के भेद नखशिख वर्णन सौन्दर्य-चित्रण हाव-भाव वियोग श्रृंगार सभी तत्वों का समावेश उपलब्ध होता है ।

बिहारी ने श्रृंगार के आलम्बन स्वरूप दूसरी पक्ष में गोपियों के सौन्दर्य का वर्णन किया है ब्रज दीर्घ कमलायत नेत्रों वाली सुन्दरियों का चित्र विकसित उद्यान है । वहाँ बड़ी-बड़ी आंखो वाली ब्रजांगनाओं का और राधा का जो रूप सौन्दर्य बिहारी ने अपने समय में अंकित किया था । यौवन और रूप का वर्णन करते हुए बिहारी की दृष्टि नायिका के अंग-प्रत्यंग पर गई है और कवि ने उनका विशद् वर्णन किया है ।

बायिका जो यौवन में पदार्पण कर यह वह पुण्य संक्रामक काल है जब शिशुता की झलक अभी गयी नहीं और अंगो में यौवन छलकने लगा है ।

भावक उभरौहौं भयो कछुक परयो भरु आय ।
सीप-हरा के मिस हियो निस दिन देखत जाय ।।
x ----x-----x------x-----x

तिय तिथि तरनि किसोर वय पुन्य काल सम दौन ।
काहू पुन्यनि पाइयत बैससन्धि संक्रौन ।।

बिहारी ने नायिका के अंग-प्रत्यंग का भी वर्णन किया है ।

तरुणी के किशोरी की सहज चिक्कणता श्यामलता, सुकुमारता, अनियन्त्रता और सुगंधि आदि की चर्चा करते हुए कवि ने चित्त के रीझने और उन्हीं केशों में जा उलझने की बात बार-बार कही है ।

छुटे समेटि कर भुज उलटि, खए सीस पट डारि ।
काको मन बांधै न यह जूरो बांधनि हारि ।।
x x x x

छुटे छुटावे जगत में सटकारे सुकुमार ।
मन बांधत बेनी बंधे नील छबीले बार ।।

नायिका के ललाट पर रत्नजटित टीका तो विशेष रूप

से शोभावर्धक होता है और उसके गोरे रंग के भाल पर तो लाल पीली सफेद श्याम सभी रंग की बिन्दिया बेहद खूबसूरत लगती है ।

पद्माकर - {जन्म संवत् 1810}

पद्माकर तैलंग ब्राह्मण थे पद्माकर के पिता मोहन लाल भट्ट मध्यप्रदेश के अन्तर्गत सागर में रहा करते थे।

पद्माकर की निम्न कृतियाँ थी।

{1} अनूपगीर हिम्मत बहादुर की विरुदावली

{2} ईश्वर पचीसी {3} गंगालहरी {4} जगत विनोद

{5} जमुना लहरी {6} पद्माभरण {7} प्रबोध पंचाशिका

{8} राजनीति {9} रामरसायन {10} सिलहिरी लीला

{11} विरुदावली।

पद्माकर की रचनावली में चित्रतत्व की प्रधानता है जिस द्रव्य को कवि काव्य का विषय बनाता है उसमें चित्रतत्व की योजना वह तभी करता है जब उसकी अन्तर्वृत्ति उसमें रमती है इनकी अन्तर्वृत्ति श्रृंगार के ही क्षेत्र में रमती है नारी के रूप चित्रण में उसके हाव-भाव के निरूपण में इन्होंने अपनी इस वृत्ति का पूरा परिचय दिया है।

पद्माकर की नायिका तो उनके मन की कल्पना, मनोभिलषित सुन्दरता मनोवांछित सौकुमार्य आदि का साक्षात्

स्वरूप तो है ही । और साथ ही पद्माकर की नायिका रीतिशास्त्रीय रस ग्रन्थो अथवा नायिका भेद ग्रन्थो मे वर्णित परंपरा प्राप्त नायिका भी है जो आयु लज्जा यौवन परिस्थिति आदि नाना आधारो पर शत्-शत भेद-प्रभेदो के साथ नाना रूपों मे चित्रित हुयी हैं ।

नायिका के रूप का वर्णन किया है नेत्रों पर बहुत सी उक्तियाँ तो पद्माकर ने नहीं कही है परन्तु जो भी उक्तियाँ हैं उनमें नेत्रों के प्रभाव का कथन हुआ है । नेत्र बिना पैरों के दौड़ते है बिना हाथों के प्रहार करते है । अंग रहित होने पर तो इनके ये हालत है । कहीं अंगशक्ति सम्पन्न होती है तो ये आँखे न जाने क्या आफ्त कर डालती है ? खंजन मीन मृगादिको का मान भंजन करने वाली प्रिय की आँखे कलेजे में ही अटकी हुई हैं ।

{क} पायन बिना ही करें लाखन ही बार आँखे ।
पावन जौ पाँवै तो कहा धौं कीर डारती ।

{ख} लाज के कहाहित कताहिन के भाले लिए ।
नेजबार नैना वे करेजे में लगे रहैं ।।

नायिका के कपोलस्थ तिल का कल्पनाश्रित एवं संदेह-संश्लिष्ट वर्णन रीतिकालीन सौन्दर्य वर्णन की परिपाटी का एक

प्रतिनिधिक उदाहरण कहा जा सकता है ।

कैधो रूप रासि में सिंगार रस अंकुरित

संकुरित कैधो तम ताड़ित जुन्हाई में ।

कहै "पद्माकर" किधौं काम कारीगर

नुकता दियो है हेम-फरद सुहाई में ।

कैधो अरविन्द में भलित-सुत सोयो आनि,

ऐसो तिल सोहत कपोल की ललाई में ।

कैधो परयौ इन्दु में कलिन्द जल बिन्दु आई में ।।

गरक गुविन्द किधौं गोरा की गोराई में ।

राधिका के कपोलों पर जो तिल है वह राधिका की गौरता पर मुग्ध होकर आ अटके हुए मानो श्याम वर्ण गोविन्द है सलोनी रूपागंना के अधरो पर खेलती हुयी मुसकान में जो मिठास है वह ऐसी है जिसमें समग्र सृष्टि का ही माधुर्य लाकर समो दिया गया है । गुलकंद, दाख, कलाकंद, सुधा, मधु, ईख, छुहारा, मिश्री, बतौधी आदि की भी मिठास जैसे वह लूटकर-ले आई और उन्हें उसने अपने अधरो में भर रक्खा है ।

सैयद गुलाम नबी "रसलीन" - §जन्म संवत् 1749§

सैयद गुलाब नबी "रसलीन" जिला हरदोई के बिलग्राम के निवासी थे। इनके गुरु का नाम मीर तुफेल अहमद था और इन्हें हिन्दी काव्य रचने की प्रेरणा अपने गुरु मीर से ही प्राप्त हुयी।

रसलीन की प्रमुख रचना "अंग दर्पण" और "रसप्रबोध" है।

अंगदर्पण में नारी के नखशिख का वर्णन किया गया है नखशिख सौन्दर्य वर्णन नायिका भेद का अंग माना जाता है अंग दर्पण की रचना सम्वत् 1997 वि0 में हुयी थी।

अंगदर्पण में क्रमश: बाल बेनी जूरा माँग टीका बिन्दो श्रवणा भूषण भौंहे पलक नेत्र बरूनी पुतरी काजर चितवन कटाक्ष कपोल स्वेद कण नथ लटकन अधर चिबुक मुखमण्डल मुस्कायन, ग्रीवा कर्ण भूषण बाँह अंगुरी कंचुको रोमावली त्रिबली नाभि नीबी किंकनी पी0 श्री नुपुर अनवट बिछिया तथा सम्पूर्ण नायिका का वर्णन किया गया है।

नचला अमला कमल सो, चपला सो चल चारु।
चंद्रकला सो सीतकर कमल सी सुकुमार।।
मुख छबि निरखि चकोर अरु तन पानिपलखिमीन।
पद पंकज देखत भँवर होत नयन रसलीन।।

"रसप्रबोध" की रचना रसलीन ने सम्वत् 1798 में की थी इसमें रस का वर्णन है और मुख्य रूप से श्रृंगार रस और नायिका-भेद का है ।

मोहनलखि यह सबन ते, है उदास दिन राति ।
उमहति हंसति बकति डरति, गिपति विलखि रिसति ।।
जब निकस्यौ तब रसन में, यह रसराज कहाय ।
तब बरन्यौ याको कबिन, सब ते पहिले ल्याय ।।

इस दोहे में निर्वेद उत्साह हास आश्चर्य, भय घृणा शोक, क्रोध आदि के श्रृंगार रस में संचारी होने का संकेत है आगे श्रृंगार रस के आलम्बन रूप नायिका के प्रसंग में नायिका भेद का वर्णन किया गया है ।

आलम

आलम ब्रजभाषा के मुसलमान कवियों में प्रमुख स्थान रखते हैं । आलम नामक कवि दो हुए हैं एक आलम अकबर तथा दूसरे आलम औरंगजेब के पुत्र मुअज्जमशाह के आश्रित थे । तथा एक दूसरे आलम ही रीति कालीन प्रसिद्ध कवित्त सवैया पद्धति के श्रृंगारिक मुक्तकों के रचयिता थे । और इन्हीं के साथ "शेख" वाली किंवदन्ती सम्बद्ध हैं ।

आलम की प्रकाशित प्रसिद्ध कृति "आलमकेलि" के सम्पादक दीन जी का भी यही मत हैं परन्तु पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ में प्रकाशित श्री भवानी शंकर याज्ञिक का आलम और रस खान शीर्षक लेख कतिपय मौलिक प्रमाणों के आधार पर नयी मान्यताओं को सामने रखता है, जो महत्वपूर्ण एवं विचारणीय है पहली मान्यता यह है कि तथाकथित दो आलम मानने की प परम्परा सर्वथा भ्रान्त है, क्योंकि दोनों व्यक्ति एक ही थे । जैसा विभिन्न रचनाओं में परस्पर पाये जाने वाले कुछ अंशों से विदित होता है दूसरी मान्यता का सम्बन्ध आलम और शेख से सम्बद्ध उस प्रसिद्ध किंवदन्ती से है जिसके आधार पर यह कहा

जाता है कि आलम हिन्दू थे और शेख नाम की रंगरेज प्रेमिका के आकर्षण से प्रेरित होकर मुसलमान हो गये तथा आलमकेलि में शेख छाप पाये जाने वाले मुक्तक आलम की उसी प्रेयसी के हो रचे हैं ।

रीतिमुक्त कवियों में आलम का स्थान सर्वोच्च है की निम्न कृतियाँ है ।

(1) माधवानल कामकंदला

(2) श्याम सनेही

(3) आलम के कवित्त

आलम के काव्य की मुख्य भावना शृंगार ही है जिसे उन्होंने "आलमकेलि" में मुक्तकों के अन्तर्गत तथा माधवानल काम कन्दला और "श्यामसनेही" में कथा के माध्यम से अभिव्यंजित किया है ।

आलम कवि ने अपनी कविता में मुख्य रूप से नायिका-नायक प्रेम का वर्णन किया है । स्त्री पुरूष का पारस्परिक सम्मोहन जो सामान्यतया सभी रीति कवियों का प्रधान वर्ण्य रहा है । आलम का भी काव्य विषय बना है आलम कवि की दृष्टि नायिका के सौंदर्य पर ही विशेष रूप से निबद्ध रही है । उसका वर्णन उन्होंने विशेष

विस्तार और मनोवेग से किया है ।

नारी के सौन्दर्य का वर्णन आलम ने तीन रूपों में किया है एक तो आलम्बन रूप में जिसमें साक्षात् उसी का वर्णन किया गया है दूसरे दूती के माध्यम से जिसमें नायिका के सौन्दर्य सौकुमार्य आदि का कथन करती है तीसरे नायक को ही नायिका पर ही रीझा हुआ दिखाकर नारी के अंग-प्रत्यंग पर कवि की दृष्टि गयी है तथा उसके सौन्दर्य पर कभी कोई उपमा निछावर की गई है । और कभी कोई उपमा निरस्कृत । नायिका के बोल की मिठास, अंग की कांति मुख का सौन्दर्य कटि की क्षीणता वेणी, छूटी हुयी अलकें, हंसना रूठना, अंग-अंग से छवि का छलकना । अंगों के आभूषण, दांत, नाक, आंख सभी पर कवि की दृष्टि दौड़ी है इन्हीं के अलंकृत उल्लेखों से ही नायिका के रूप का वर्णन आलम की कविता में हुआ है -

{क} हीरा से दसन मुख बीरा नासा कोर चारु,
सोने से शरीर रवि चली घोर घाम को ।

{ख} आलम कहै से बड़े बार है संवार भए,
तेरी तन्हाई सुघराई सी जगति है ।
मोतिन को हार हिए हौंस ते पहीरैं नहीं,
पोत ही के हरा अपछरा सी लगति है ।।

आलम ने एक स्थान पर लिखा है कि तेरे अंग-अंग से तो ऐसी-ऐसी नवीन कांति फूट रही है कि जान पड़ता है जैसे तूने किसी रूप और सौन्दर्य केमुल्क को ही लूट लिया है स्वाभाविक सौन्दर्य का ही वर्णन करते हुए एक अन्य स्थान पर आलम ने लिखा है कि तेरे कनक से वर्ण वाले गात में हीरे की सी मुज्ज्वल आभा है तेरे लिए शृंगार के सारे प्रसाधन तो व्यर्थ है । तू तो अपना शृंगार स्वयं है तुझे वर्जकार विधान ने स्वयं तुझे अनुपम शोभा प्रदान कर जड़ाऊ गहने सा कान्तिपूर्ण बना दिया है ।

ऐसे रूप देस की लुनाई लूटि लई है तु,

नई - नई छबि अंग-अंग उमगति है ।

मोतिन को हार हिए हाँस ते पहीरै नहीं,

पोति ही के छरा अपछरा सी लगति है ।।

कहीं-कहीं आलम ने नायिका के सौन्दर्य पर मुग्ध हो उसे कामकेलि के सर्वथा उपयुक्त बतलाया है और शरीर के समस्त संतापों को हर लेने वाला कहा है ।

नायिका सौन्दर्य सौकुमार्य आदि का जो अभिव्यंजन कवि ने दूतिकाओं के मुख से कराया है उससे भी कवि का ही सौन्दर्य

दृष्टि और सौन्दर्यानुभूति लक्षित होती है प्रयोजन भी नायिका का ही सौन्दर्यांकन ही होता है दूतिका मध्यस्थ मात्र रहती है । इस प्रकार से नायक में नायिका के प्रति रुचि उपजाने अथवा अनुराग जगाने का जो आयोजन किया गया है उसका कारण परम्परा पालन के अतिरिक्त और कुछ नहीं इससे आलम की काव्य शक्ति कुंठित सी हुयी है तथा अनपेक्षित पिष्टपेषण ही हुआ है जिससे स्वतंत्र कवित्त शक्ति के ह्रास का भी पता चलता है और साथ ही साथ कामुकता की दुर्गन्ध भी फूटी है -

काम रस माते हैं करेरो कैलि कीन्हीं कान्ह,
फूलनि की मालिका तु मीड़ि मुरझाई है ।
"आलम" सुकवि यहि और सो न जानो कलि
ऐसी नारि सुकुमारी कहीं कौन पाई है
कमल को पात लै लै हाथ या को गात छूजै ।
हाथ लाय मैलो होय गात की निकाई है,
अंबर है मुख तनमुख तासो बात कीजै ।
नखतारू उसाँस लागै मुकुट को हाई है ।।

तृतीय : अध्याय

महिला छवि निरूपित करने वाले रीतियुगीन प्रमुख कवि

{क} बिहारी

{ख} केशवदास

{ग} देव

{घ} घनानंद

{ङ} मतिराम

{च} पद्माकर

महिला छवि निरूपित करने वाले रीतियुगीन प्रमुख कवि

मेरा मानना है कि रीतिकाल के प्रमुख कवियों में केशव के अतिरिक्त बिहारी, देव, घनानन्द, चिन्तामणि, मतिराम, पद्माकर जैसे कवि मूर्धन्य है । इनमें भी बिहारी को इस काल के प्रतिनिधि कवि को मान्यता प्राप्त है । डॉ॰लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय ने तो बिहारी लाल को गोस्वामी तुलसीदास के बाद हिन्दी का सर्वाधिक प्रसिद्ध कवि माना है ।

प्रस्तुत सन्दर्भ में महिलाओं को छवि को निरूपित करने वाले इन विशिष्ट कवियों की रचनात्मकता का विवेचन और आकलन करना चाहूँगी ।

कृष्ण भक्तो में राधा कृष्ण के माध्यम से आध्यात्मिक भाव की व्यंजना तो अवश्य की पर उनमें गोस्वामी तुलसीदास जैसी मर्यादा की भावना नहीं थी । उनके प्रेम और सौन्दर्य के वर्णन में मन को पूरी छूट दिखायी देती है । सूरदास को छोड़ कर अन्य कवियों में भक्ति का अंश कम ही है लौकिकता बार-बार उभर कर आती है और कुछ अंश तो अश्लील भी हो गये है । कहने का तात्पर्य है कि रीतिकाल को नायक-नायिका वाली प्रवृत्ति के बीज कृष्ण भक्ति काव्य में ही बो दिए गए थे । रीतिकाल में राधा-कृष्ण का तो बहाना मात्र है नहीं तो विलासी राजाओं की वासना तुष्टि के लिए उस काल के कवियों ने पूरी सामग्री जुटायी है ।

बिहारी दास

इस दिशा में बिहारी ने नारी की छवि को प्रेम और सौन्दर्य द्वारा प्रस्तुत किया है । बिहारी ने प्रेम की विविध दशाओं का वर्णन करते-करते प्रेम को वासना में मिला दिया नायिका के श्रृंगार उसके हाव भाव, आकर्षण, प्रयत्न व्यवहार सबमें उत्कट कामना झलकती है । वास्तव में यह उस युग के वातावरण का दोष है । बिहारी की कविता पर कुछ प्रभाव फारसी काव्य का भी पड़ा है । जिसमें शरीर के सौन्दर्य के माध्यम से जीवन के सुख की गहरी ललक पायी जाती है ।

बिहारी की कुछ रचनात्मकता का विवेचन करना चाहूँगी ।

मेरी भव बाधा हरौं, राधा नागरि सोई ।
जा तन की झाई परैं, स्याम हरित द्युति होई ।। {1}

इसमें राधा की दैवी शक्ति का परिचय दिया गया है और इस दृष्टि से यह एक प्रार्थना परक दोहा है यहाँ कृष्ण से भी अधिक राधा के महत्व को प्रतिपादित किया है इसमें राधा के प्रति कृष्ण के आकर्षण को व्यक्त किया गया ।

तजि तीरथ,हरि राधिका तन द्युति करि अनुराग ।
जिहिं ब्रज-केलि-निकुंज-मग पगपग होतु प्रयागु ।। {2}

{1} बिहारी सत्तसई - दोहा संख्या {1}

{2} " " - दोहा संख्या {37}

बिहारी को भ्रमण करने वाले लोगों से कहा कि तू भ्रमण करना छोड़कर राधा और कृष्ण के शरीरों की कांति में अपना अनुराग दृढ़ कर । इससे ब्रजभूमि उन कुंजों की ओर जहाँ राधा-कृष्ण ने प्रेम क्रीड़ाये की थी । जाने वाले पथ के एक-एक चरण पर वैसे ही पुण्य की प्राप्ति होगी, जैसे प्रयोग राज के दर्शन से होती है यहाँ पर राधा की छवि को कितने अच्छे ढंग से प्रस्तुत किया है ।

नहिं नराग नहिं मधुर मधु, नहिं बिकासु इहिं काल ।
अली, कली ही सौं बंध्यो, आगैं कौन हवाल ।। §1§

यह बिहारी का बहुत प्रसिद्ध दोहा है इसे बिहारी ने महाराज जयसिंह से मिलने के पूर्व उनके पास भिजवाया था जिसे पढ़कर महाराज बिहारी से पूछने के लिए आतुर हो गये थे । महाराज उस समय अपनी नवविवाहिता किशोरी रानी के प्रेम में ऐसे आसक्त थे कि राज-काज के लिए भी रनिवास छोड़कर बाहर नहीं निकलते थे यें अन्योक्ति है कि न तो इसके अंगो का अभी विकास हुआ है, न इसका रूप खिला है, न इसे रस का ही पूर्ण ज्ञान है, फिर भी राजा इस मुग्धा के प्रति आसक्त हो उठा है । कुछ दिनों में जब यह पूर्ण युवती होगी । तब न जाने महाराज के मन की क्या दशा होगी ।

कहत नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत, लजियात ।
भरे भौन मैं करत हैं नैननु हीं सब बात ।। §2§

---

§1§ बिहारी सतसई - दोहा नं0 10

बिहारी ने नारी का सम्पूर्ण रूपचित्र बहुत कम खींचा है उनकी चित्त वृत्ति हावों और चेष्टाओं को ही अंकित करने में अधिक रमी है । इन चित्रों में एक प्रकार की गतिशीलता है जो आलम्बन की क्रियाओं या सचेष्ट व्यापारों को व्यक्त करती है इसलिए ऐसे चित्रों में क्रिया विधायक रूप चित्र कह सकते हैं ।

बिहारी ने नारी सौन्दर्य को उसके विशेष आयामों में चित्रण किया है केवल उसके रूप का ही चित्रण नहीं किया बल्कि उसकी विविध मुद्राओं चेष्टाओं और परिस्थिति विशेष में उसकी प्रतिक्रियाओं का ही चित्रण हुआ है कवि ने आंगिक सौन्दर्य को ही रूपायित करने की चेष्टा नहीं की बल्कि उसकी प्रवृत्ति के अनुरूप भावात्मक सौन्दर्य को ही आकृति प्रदान करने की चेष्टा की है ।

उदाहरण द्रष्टव्य है -

सेत सारी ही सों, सब सौते रंगी स्याम रंग ।
सेत सारी ही सौं रँगै स्याम लाल रंग के ।।

विपरीत वर्णों की योजना द्वारा बिहारी ने चित्रात्मकता प्रदर्शित की है ।

जहाँ राधा-कृष्ण खड़े हैं वह भवन गुरुजन-परिजनों से भरा हुआ है जिनके संकोच के कारण वे बोल नहीं पाते फिर भी दोनों इतने चतुर हैं कि मन की सब बातें आँखों के इशारे से ही कर डालते हैं ।

बिहारी की दृष्टि नायक से अधिक नायिका पर अधिक आकर्षित थी । नायक-नायिका को कहीं मिल जाता है तो किसी न किसी बहाने उस पीड़ा को व्यक्त करने के उपाय खोजती है नायक उसके हृदय के आकर्षण को पहचान कर उसे भेंट भेजता है । आकर्षण के स्थायी हो जाने पर नायिका गुरुजन-परिजन को आँख बचाकर अभिसार के लिए तैयार नहीं होती पर एकान्त से पहले नायिकक्नायिका का मिलन होता है, क्रीड़ा करने से पहले नायिका मदिरा-पान करती है और थोड़ी देर झूठी "नाहीं" "नाहीं" के उपरान्त सुरति सुख में लीन होती है ।

मिलि परछांही जोन्ह सौं रहे दुहुन के गात ।

हरि राधा इक संग ही चले गली में जात ।। §1§

-----

§1§ बिहारी सतसई - दोहा संख्या 129

बिहारी ने स्वप्न के माध्यम से मिलन के सुख तथा उसके अंग के बाद के वास्तविक बोध के द्वारा अनुभूति को मार्मिक बनाया गया है बिहारी ने संयोग के चित्रण को मादक बनाने के लिए ऐसी अनेक परिस्थितियों की कल्पना की है ।

मैं मिसहैं सोयो समुझि मुंह चूम्यो ढिग जाय ।
हस्यौ खिस्यानी गल गह्यो रही गले लटलाय ।।

निष्कर्षत: बिहारी ने नायिका की छवि प्रस्तुत करने में कोई कसर नहीं छोड़ा ।बिहारी की मूल प्रवृत्ति श्रृंगारी है । इसी कारण जहाँ नायिका भेद विपरीत और श्रृंगार का प्रसंग आता है उनकी अभिव्यक्ति में चमक आ जाती है । इसी कारण बिहारी रीतिकालीन प्रेमभावना के प्रतिनिधि कवि है । बिहारी की सतसई श्रृंगार भावना का काव्य हैं नायिका भेद या नखशिख सभी दृष्टि से अनुपम प्रतीत होता हैं इसी कारण इनकी अभिव्यक्ति में रस भी है चमक भी ।

केशव दास

केशव रीतिबद्ध कवि हैं इनको अलंकारों के चमत्कार मूलक प्रयोग का प्रतिनिधि कवि कहा जा सकता है ।

केशव को "रसिक प्रिया" और "कवि प्रिया" का कथ्यविषय मुख्यत: श्रृंगार रस ही है इसमें महिला छवि को निरूपित किया है । नायिका के अलंकृत सौन्दर्य का वर्ण्य होता है अनेक प्रकार के श्रृंगार प्रसाधनों से अलंकृत होकर वह अपूर्व छवि धारण करती है -

कोमल विमल मन विमला सी सखी साथ,
कमला ज्यों लीने हाथ कमल सनाल के ।
नुपुर की धुनि सुनि भौरे कलहंसनि के,
चौंकि-चौंकि परे चेटुवा मराल के ।
कचनि के भार कुच भारनि सकुच भार,
लचकि-लचकि जात कटि तट बाल के ।
हरे-हरे बोलत बिलोकत हँसत हरे,
हरे-हरे चलत मन लाल के ।   -- {1}

केशवदास वस्तुत: अलंकार प्रिय कवि थे इसलिए उनकी कविता में उत्प्रेक्षाओं के अनेक उदाहरण द्रष्टव्य हैं केशव द्वारा रसिक प्रिया के ऐसे उदाहरण द्रष्टव्य है --

---

{1} केशव दास - रसिक प्रिया, छन्द सं० 6

चन में वृषभानु कुमारि मुरारि में रूचि सों रस रूप पिये ।
कल कूजत पूजत काम कला विपरीत रची रति केलि किये ।।
मान सोभित स्याम जराइ जरी अति चौंकी च लै चल चारु हिये ।
मरकतूल के झूल झुलावट मानु मनो ससि अंक लिए ।।   ---- {1}

केशव कृत रसिक प्रिया का एक उदाहरण और प्रस्तुत करना चाहूँगी ।

केशव एक समैं हरि राधिका आसन एक लसैं रंग भीने ।
आनंद सो तिय आनन की दुति देखत दर्पण में दृग दीने ।।
भाल के लाल बाल विलोकत ही भरि लालन लोचन लीने ।
सासन पीय सवासन सीय हुतासन में मनो आसन दीने ।। --{2}

चमत्कार कीड़ावृत्ति तथा कल्पना का महत्त्व देने के कारण कवि ने ऐसे क्लिष्ट संयोजनों के उदाहरण प्रस्तुत किये हैं ।

रूप की अतिशयता की व्यंजना अनेक अप्रस्तुतों के एक साथ गुंफन के द्वारा हुयी है -

केहरि कपोल कीर को मृग मीन फनि ।
सुक पिक कंज कुंजरीत बन लीनो है ।।
मृदुल मृनाल बिम्ब चम्पक मराल बेलि ।
कुंकुम कंद दूनो दुख दीनो है ।
जरत कनक तन तनक ससि ।।
बढ़त घटत बंधु जीव मन्थ हीनो हू ।
केसोदास भव कोविद कुंवर कान्ह ।
राधिका कुंवारि कोप कौन पर कीनो है ।

{1} केशवदास - रसिक प्रिया, छन्द संख्या 20

{2} "   "   "   "   "   22

यहाँ राधिका के रूप की अतिशयता व्यंजित करने के लिए अनेक अप्रस्तुतों के भयभीत होने के उल्लेख से राधिका के सौन्दर्य की व्यंजना में एक सान्द्रता आ गयी है ।

नायिका का रूप कवि की भावना का आलम्बन बनता है ऐसे स्थलों में उसका आंगिक सौन्दर्य अथवा रूप की समग्रता कवि के मानस को आन्दोलित करती है । और इसे वह पूरी ईमानदारी के साथ व्यक्त करता है ।

लसत गूजरी उजरी विलसत लाल इजार ।
लिए हजारनि के हरे बैठी बाल बजार ।।

केशव के विरहिणी नायिका के लिए अनेक अप्रस्तुतों की कल्पना की गयी है -

दीरघ दशन बसै केसवदास केशरी ज्यों ।
केशरि का देखे बनकरी ज्यों कंपत हैं ।।
बासर की सम्पदा चकोर ज्यों न चितवत ।
चकवा ज्यों चंद हौं ते चौगुनी चपत है ।।
केका सुनो व्याल ज्यों विलात जात घनस्याम ।
चातक ज्यों स्याम नाम तेराई जपत हैं ।।

महाकवि देव

महाकवि देव ने सौन्दर्य को वस्तुवादी दृष्टिकोण से देखा है । आध्यात्मिकता नैतिकता अथवा आदर्शवादी दृष्टिकोण की उन्होंने अपेक्षा की और प्रथम दृष्टि से इन्द्रिय ग्राह्यता को ही सौन्दर्यानुभूति का आधार बनाया । विलासिता प्रधान वातावरण होने के कारण सौन्दर्य चित्रण ऐन्द्रिय तथा स्थूल है ।

देव ने नारी सौन्दर्य में गतिशीलता लाने के लिए नायिका को होली खेलती हुयी, हिंडोला झूलती हुयी । जलक्रीड़ा करती हुयी, अभिसार करती हुयी अथवा अनेक प्रकार की विलास क्रीड़ाओं में रत दिखलाई देती है सौन्दर्य को मादक रूप में उपस्थित करने में सहायक सिद्ध हुए है ।

> अंग-अंग उमग्यो परम रूप रं, नवजीवन अनुपम उज्यासन उजारो सी ।
> उमर-उमर बगरावति अमर अंग जगर मगर आपु आवति दिवारी सी ।। ॥1॥

॥1॥ सुख सागर तरंग -- देव

॥2॥ पद संख्या - 322

काम वृत्ति को उभारने के लिए नारी के सौन्दर्य को मादक ऐन्द्रिय तथा उत्तेजक बनाने की चेष्टा की ।

देव का स्नान कर जल से बाहर निकलती नायिका का सौन्दर्य दृष्टव्य है --

पीत रंग सारी गोरे अंग मिली गई "देव",
श्री फल उरोज आभा आभासे अधिक सी ।
छूटि अलकानि छलकानि जल बूंदन की,
बिना बेनी बंदन वदन शोभा बिकसी ।
तजि-तजि कुंज पुंज अमर मधुरा गुंज गुंजरत,
मंजु रव बोले बाल पिकसी ।
नीची उकसाई नेक नयन हंसाय हंसि,
ससि मुखी सकुचि सरोवर ते निकसी । -- {1}

देव ने भावविलास मे रतिक्रिया की प्रत्येक स्थितियों का सूक्ष्म चित्रण कवियों ने किया है ।

खाट की पाटी रहै लपटाइ करौंत की ओर कलेवर काँपे ।
चूमत चौंकति चंदमुखी कवि देव कपोल निचोलनि चाँपे ।।
बाल बधू बिछियानि के बाजते लाजते मूंदि रहैं अंखिया पै ।
आंसु भरे सिसकै, रिसकै, मिसकै करि झारि झुकै मुख झांपे ।।-{2}

{1} रीति शृंगार - देव - पृष्ठ संख्या 101
{2} भाव विलास - देव - पृष्ठ संख्या 4, पदांक0,30

प्रौढ़ा नायिका के चित्रण में रतिक्रिया स्वाभाविक रूप से चलती है ।

> सौंधे की सुवास आसपास भरे भौन रह्यो भरत उसास बासन बसात है ।
> कंकन झनित अगनित रण किंकीन के नुपूर रनित मिले मनित सुहात ।।
> कुंडल टलट मुख मंडल झलमलात झूलत दुकूल भुज मूल भहरात है ।
> करता बिहार कहै "देव" बार बार छूटि-छूटि जात हार टूटि जात है ।।
>
> --{1}

सुरति की स्वाभाविक व्यापार के समान विपरीत रति भी देव का प्रिय विषय रहा है । कवि ने एक परिपाटी के रूप में पालन किया है ऐसे वर्णन तत्कालीन जनमानस की विकृत रुचि के परिचायक है ।

कवि देव ने सुरत की भाँति सुरतान्त अथवा सुरत श्रम का भी वर्णन कवियों ने किया है इसके अन्तर्गत रतिक्रिया से उत्पन्न क्लान्ति लज्जा वस्त्रों की अस्त-व्यस्तता इत्यादि का चित्रण किया है, मध्या नायिका के सुरतान्त का एक उदाहरण दृष्टव्य है --

> आरस उनींदी अंखियान छुवै करीन उन्नत उरोज नख रखै देख रतियां ।
> कंचुकी कसति उससति औ हंसति डीठि नीची अधखुली त्यों लजित लोल औ अंखियां ।।
> अंग-अंग अंगिरात बसबर मोती छूटित अधर देखै सौतिहू बिलखियां ।
> बाल के सिधारे तें निरखि हाल सेंज के बिहाल भयो बालम निहाल भयी सखियां ।।-{2}

{1} रस विलास देव पृष्ठ संख्या 8, पद संख्या 38

{2} महाकवि देव - रस विलास 6/23

देव ने अनेक स्थलों में विकृत चित्रण करके रीतियुग के कामुकतामय वातावरण का चित्र उपस्थित किया है ।

उदाहरण द्रष्टव्य है ।

मेरे हू अंक जो आवें निसंक तौ हो उनके परजंकहि जैहों ।
पान खवाइ उन्हें पहले तब नाथ के हाथ पाननि लैहों ।।
ऐसी न होइ जो देह को दीपति देव को दोप समीप दिखैहौं
मोहन को मुख चूमि भटू तब हौं अपने मुख चूमन दैहौं ।।+-{1}

रीतिकाव्य में संयोग चित्रण में रतिभाव पूर्ण उद्दामता में वर्तमान है ।

देव को गंभीर रसिकता इस क्षेत्र में खूब खुलकर खेली है उनके वर्णनों मे ऐसा लगता है जैसे कवि को संपूर्ण चेतना नारी के अंगो से लिपटकर रस स्नात हो जाती है ।
उदाहरण द्रष्टव्य है --

भोर ही भोर ही श्री वृषभानु के आयो अकेलोई केलि भुलान्यो ।
देव जू सोवत हो उह भामतो झांने महा अलकैं पट-तान्यौं ।।
आरस ते उघरी एक बांह भरो छवि देखि हो अकुलान्यौं।
मोहत हाथ फिरै उमड्यौं सो मड़ी बीच फिरै मड़रान्यौं ।।

नायिका की चंचलता को रूपायित किया है --
झूमि घटा उझकै कहूँ देव सु दूरि ते दौरि झरोखनि झूलो ।
हास हुलास विलास भरी भ्रम खंजन मीन प्रकासनि तूली ।।
चारिहू ओर चलैं चपलैं सुमनोज के तेज सरोज सो फूली ।
राधिका की अँखिया लखिकै सँखिया सब संग की कौतुक भूली ।।--{2}

{1} महाकवि देव - भाव विलास 4/38
{2} महाकवि देव - भाव विलास 4/75

घनानंद

घनानंद बृजभाषा की स्वच्छन्द काव्यधारा के सर्वोत्कृष्ट कवि है इनकी संवेदना सर्वाधिक साहित्य है घनआनंद स्वच्छन्दवादी कवि होने के कारण रूढ़ि विरोध अपने चरम रूप में दिखाई देता है प्रेम की अनन्य साधना तथा विरह की तीव्रता के कारण कविस्वच्छन्द वादी प्रवृत्ति से प्रभावित है घनानंद की अभिव्यंजना रूढ़ियों से प्रभावित अवश्य है किन्तु उनसे बंधी हुयी नहीं है । इसी कारण इनकी रचनाओं में वर्णन की रूढ़िबद्ध परम्पराओं के स्थान प र अनुभूति की स्वच्छन्द अभिव्यक्ति हुयी है ।

घनानंद जी ने नारी की प्रत्येक छवि को निरूपित किया नारी की प्रत्येक स्थितियों और व्यापारों के सौन्दर्य का सूक्ष्म निरीक्षण किया है । घनानंद को प्रेम को एकांगी साधना के रूप में ग्रहण करते है जिसमें इसकी पीड़ा को झेलना अनिवार्य शर्त है रीतिमुक्त कवि घनानंद "प्रेम के पीर" के अराधक रहे है । अतः इनकी रचनाओं में नारी के श्रृंगार के संयोग पक्ष की अपेक्षा वियोग की अधिक पुष्टि हुयी है ।

विरह की व्यथा की व्याकुलता को उद्दीप्त करने के लिए घनानंद ने नायक की निष्ठुरता और अपनी समर्पण भावनाओं का निरूपण किया है । इसके लिए नायक के प्रति अनेक उपालम्भ वाक्यों की योजना हुयी है । नायिका ने अपने हृदयरूपी पत्र में प्रेम का मात्र लिखा था, बहुत प्रयत्न करके उसे अपने प्रिय के चित्र से सजाया था ।

इसमें कभी किसी दूसरे को कथा लिखी नहीं गयी । हृदय रूपी ऐसे पवित्र पत्र को नायक की निष्ठुरता ने टूक-टूक कर दिया ।

विरह संयोग के अभाव की स्थिति है अतः इस अभाव में उत्पन्न व्याकुलता, उद्वेग इत्यादि स्थितियों का निरूपण करना है घनानंद ने इन स्थितियों के अनेक मार्मिक तथा हृदयस्पर्शी चित्र अंकित किया है ।

विरहिणी का एक चित्र द्रष्टव्य है :-

भोर ते सांझ लौं कानन ओर निहारति बावरि नेकु न हारति ।
सांझते भोर लौं तारनि ताकिबो तारनि सों इकतार न हारति ।।
जौ कहूं भावतो दीठि परै घनानंद आंसुनि औसरि गारति ।
मोहन सोहन जोहन की लगियै रहै आंखिन के उर आरति ।। --{1}

इस छन्द में प्रिय को ढूढ़ने की आतुरता की मार्मिक अभिव्यक्ति घनानंद ने की है --

अंतर हौ किधौं अंत रहौ, दृग फारि फिरौं कि अभागिनि भीरौं ।
आगि जरौं अकि पानी परौं अब कैसो करौं हिय का विधि धीरौं ।।
जो घन आनंद ऐसो रुची तौ कहा बस है अहो प्रानीन पीरौं ।
पाऊं कहां हरि हाय तुम्हें धरती में धसौं कि अकासहि चीरौं ।। --{2}

इस छन्द में प्रिय को पाने के लिए विरहिणी यहां आग में जलने, पानी में कूदने धरती में धंसने और आकाश को भी चीरने के लिए तैयार है ।

विरह व्यथा की चरम परिणति वहां होती है जहां विरही अपने प्रिय के ध्यान में इतना अधिक केन्द्रित हो जाता है

{1} प्रेम पत्रिका छन्द - 85
{2} घनानंद ग्रन्थावली - सुजान हि, 416

वाली अवस्था की ओर संकेत करती है ।

घनानंद की निम्नांकित उदाहरण इस दिशा में दर्शनीय है --

ऐरे बीर पौन ! तेरो सबै ओर गौन, बारी तोसो और कौन मन
तरकौं ही बानि दै ।
जगत के प्रान ओछे बड़े सो समान घनानंद निधान, सुखदान, दुखियानि दै।
जान उजियारे गुन और अंत मोहो प्यारे अब मैं आमोहो बैठे पीठ
पहियानि दै ।
विरह विथाहि मूरि आँखिन मैं राखौं पूरो धूरि तिनि पायनि को हाहा
नेक आनि दै ।। -{1}

विरह व्यथा को उद्दीप्त करने में प्रकृति के व्यापारों का महत्वपूर्ण योग है । प्रकृति के सभी उल्लासपूर्ण व्यापार विरहिणी को पीड़ित करते हैं इसी पीड़ा की अतिशयता घनानंद जी अपने रचना में व्यंजित करते है ।

उदाहरण द्रष्टव्य है :-

कोरी कूर कोकिला ! कहाँ को बैर को दति री कूकि-कूकि अब ही
करेजो किन कोरिलै ।
पैंडे परे पापी ये कलापो निसधौस ज्यौं हो चातक ! घातक त्यौं ही
तू हू कान फोरि लै ।।
आनंद के घन प्रान जीवन सुजान बिना जानि कै अकेली जीवसब घेरी
दल जोरि है ।।
जौं लौं करे आवन विनोद-बरसावन वे, तौ लौं के दरारे बजमारे घन
घोरि लै ।। --{2}

{1} घनानंद ग्रन्थावली - सुजानहित
छन्द संख्या - 259

{2} घनानंद ग्रन्थावली-सुजानहित -259

घनानंद की प्रेम साधना परम साधना के रूप में प्रतिष्ठित है.
उनकी परम साधना सामान्य प्रेम प्रवाह से बहुत आगे है विरह
में मंजिष्ठा राग हो जाता है प्रेम का पूरा परिपाक हो जाता
है या प्रेम का योग न होने से वह शशोभूत हो यह साहित्य
परम्परा कहती चली आ रही है, पर यहाँ प्रेम की यह परम साधना
नहीं दिखायी देती जहाँ वियोग में ही संयोग में भी वियोग का
ही अनुभव होता है ।

घनानंद ने नारी की प्रत्येक छवि को निरूपित किया है
चित्र को अधिक आकर्षण बनाने के लिए रतिक्रिया, रति मदपान
अधखुले इंग इत्यादि प्रसंगो को उद्भावना की गयी ह ।

उदाहरणार्थ-

§क§ रति रंग जागे प्रीत पागे रैन जागे नैन, आवत लगेई घूमि
झूमि छवि सी छके ।
- - - - - - - - - - -सुखद सुजान घनआनंद पोखत प्रान
अपिरज वानि उधरे हू लाज जो छको ।
---§1§

§ख§प्रिय अंग संग घनआनंद अंग हिरा
सुरति तरंग रस विवस उत मिलौनि

---

§1§ घनानंद ग्रन्थावली सुजानहित - 21

झूलनि अलक, आधी खुलनि पलक, स्रम स्वेदहि-झलक भरि
सिथिल हाँनि । ---§1§

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि कवि घनआनंद ने नारी को प्रत्येक स्थितियों और व्यापारों के सौन्दर्य का सूक्ष्म निरीक्षण किया ।

---

§1§ घनानंद ग्रन्थावली - सुजानहित,
छन्द संख्या - 3।

मतिराम

मतिराम कृत रसराज जिसमें शृंगार और नायिका-भेद का विस्तार है ।

नायिका का वर्णन करने वाला इनका सवैया बड़ा प्रसिद्ध है जो सरस एवं रमणीय काव्य का सुन्दर नमूना है ।

कुन्दन को रंग फीको लगै, झलकै इति अंगन चारु गुराई ।
आँखिन में अलसानि चितौनि में मुंह विलासन की सरसाई।।
को बिन मोल बिकात नहीं "मतिराम" लहे मुसकानि मिठाई ।
ज्यों-ज्यों निहारिए नेरे है, नैननि त्यों-त्यों खरी निकरौसी निकाई।।
--"{1}

मतिराम ने नायिका भेद वर्णन बंधी परिपाटी पर किया । मतिराम ने गूजरी के सौन्दर्य का ऐसा ही चित्रण किया है ।

ललत गूजरी ऊजरी विलसत लाल इजार
हिए हजारीन के हरौ बैठो बाल बजार -- {2}

मतिराम ने शरीर के अलंकृत हो जाने का वर्णन किया है । --

{1} मतिराम - रसराज, सवैया संख्या - 9
{2} " } " " -96

घाटने सकल एक शेरी ही की अड़ पर
हाहा न पहिरि आभारन और अंग में
कवि "मतिराम" जैसे तीछन कताक्ष तेरे,
ऐसे कहाँ सर है अंग के निखंग के । -- {1}

मतिराम ने रति प्रसंग में अतिरिक्त प्रसंनता किन्तु प्रत्यक्ष निषेध का सुन्दर वर्णन किया है -

प्रीतम को मन भावती मिलति बाहि दै कंठ ।
बातो छुटै न कंठ ते नाही छुटै न कंठ । --- {2}

मतिराम ने श्रृंगार निरूपण को ऐन्द्रिय स्पर्श देने के लिए अनेक प्रकार को परिस्थितियों की भी उद्भावना की है जिसके कारण संयोग सम्पन्न होता है । मिलन को सिद्ध करने के लिए यहाँ अनेक प्रकार की चतुराई करनी पड़ती है ।

प्रान प्रिया प्रिय आनंद सों विपरीत रची रति रंग रसो भ्वै ।
काम कलोकनि में "मतिराम" रही धुनि त्यों कीर किंकनी की है ।।
आनन की उज्यारी परी श्रम बूंद समेत उरोज लखै हैं ।
चन्द की चाँदनी के परसे मनो चन्द्र पखान पहार चले च्वै ।। --{3}

मतिराम ने ज्येष्ठा के प्रसंग में प्रपंच द्वारा कार्य सिद्धि के भी उदाहरण मिलते हैं मतिराम कृत रसराज का ये उदाहरण द्रष्टव्य है --

---

{1} मतिराम - रसराज - सवैया संख्या- 357
{2} " " " " - 370
{3} मतिराम - रसराज - " " - 345

केलि के रात अघाने नहीं दिन ही मे लला पुनि घात लगाई ।
प्यास लगी है पानी दै जाइयौ भीतर पैठिके बात सुनाई ।।
जेठ पठाई गई दुलही हँसि हेरि, हरे "मतिराम" बुलाई ।
कान्ह के बोल मैं कान न दीनो, सो गेह की देहरी मैं धरो आई ।।
--{1}

मतिराम ने नारी का चित्रण इतने खुले ढंग से किया है कि श्रृंगारिकता की जगह अश्लीलता की झलक मिलती है क्योंकि रीतिकाल विलासिता प्रधान वातावरण युग था और उसका केन्द्र बिन्दु थी नारी ।

मतिराम सतसई के निम्नांकित उदाहरण द्रष्टव्य है ।

कुचस्पर्श: रचे विरंचि बनाई ने तेरे ईस उरोज ।
तिनके पूजन को किये हरि के हाथ सरोज ।। -- {2}

नखक्षत : कान्ह कटक्षत देत यों सोहत बाल उरोज ।
सर सरोज सों संभु कौं मारत मनो मनोज ।। -- {3}

नीवी खोलना : क्यों न लहै सुख भोग को ललित बाल के साथ ।
नीची नीवी मदन की परी नाह के हाथ ।।

रीतिक्रिया की प्रत्येक स्थितियों को सूक्ष्म चित्रण कवि ने किया है -

जावक लिलार ओठ अंजन की लीक सो है, छैये न अलीक लोक जीवन बिसारिए ।
कवि मतिराम छाती नखक्षत जगमगै, सामने पग छूवे मन मैं न धारिये ।
-- {4}

{1} रस राज - 345
{2} रस राज - 28
{3} मतिराम सतसई -

कवि ने नायिका के लज्जा और प्रेम के द्वन्द्व का भी चित्रण किया है -

आये विदेश से प्रानप्रिया, "मतिराम" अनंद बढ़ाय अलेखै ।
लोगन सों मिलि आँगन बैठि घरी ही घरी सिगरौ घर पेखै ।।
भीतर भौन के द्वार खरी, सुकुमार तिया तन कम्प बिसेखै ।
घूंघट को पट ओट किये, पिय को मुख देखै ।।

विप्रलब्धा को मनः स्थिति का मार्मि निरूपण किया है -

सकल सिंगार संग लै सहेलिन को,
सुन्दरि मिलन चलि आनंद के कन्द को ।
- - - - - चंद को लाग्यौ हंसन तिया को मुख चंद,
अब चंद लाग्यौ हंसन तिया के मुख चंद को ।

पद्माकर

रीतिकालीन महिला छवि निरूपित करने वाले कवि पद्माकर सौन्दर्य के प्रति उनकी मनोवृत्ति शास्त्रीय है जिसमें वस्तुगत चित्रण प्रधान होता है कामवृत्ति को उभारने के लिए नारी के सौन्दर्य को मादक ऐन्द्रिय तथा उत्तेजक बनाने की चेष्टा सर्वत्र व्याप्त रही ।

पद्माकर ने स्नान, अधखुले अंग निद्रित सौन्दर्य की उदाहरण अपनी रचना जगद्विनोद में प्रस्तुत किया है -

स्नान - घांघरे को घूमन सु अरून दुबोवै पारि,
आंगी हूँ उतारि सुकुमारि मुख मोरै है ।
दंतन अधर दाबि दूनर भई सी चापि चौपर,
पचौवार कै चूनर निचोरै है ।

अधखुले अंग - अधखुली कंचुकी उरोज अध खुले देख
नखन रेखन के झलकै ।

निद्रित सौन्दर्य - पटपही पहकै चुभी है चौक चुम्बन की
लहलही लांबी लटै लपटी सलंक पर ।
कहै पद्माकर मजानि मरगजी मंजु मसकी
सु आंगी है उरोजन के अंक पर ।

व्यक्त निद्रा - छाजति छबीली छिति छहरि छरा को छोर,
भोर उठी आई केलि मंदिर के द्वार पर ।
एक पग भीतर सु एक देहरी पै धरै,
एक कर कंज एक कर है किवार पर ।

{1} जगद्विनोद - 14

{2} " - 517

इन उदाहरणो से स्पष्ट है कि पद्माकर ने नारी को प्रत्येक स्थितियो और व्यापारों के सौन्दर्य को सूक्ष्म निरीक्षण किया है उनके केवल आंगिक सौन्दर्य के साथ-साथ क्रिया कलापों को भी सूक्ष्म अध्ययन किया ।

पद्माकर ने नारी सौन्दर्य को अनेक क्षेत्रों में परखा है रूप गतिशीलता फाग हिंडोला आदि का भी वर्णन किया है -

ये अंग की रोसनी से सुभ सोसनी पोर कुच्यो पिन्त पाइन
जाति चली ब्रज ठाकुर पै ठमका-ठुमकौ ठकुराइन ---{1}

गतिशीलता का सौन्दर्य लाने के लिए नायिका प्राय: हिंडोला और फाग खेलती हुयी दिखलाई गयी है -

छाक छकी छतिया धरकै अंगिया उचकै कुच नीके
- - - - -यों मिचकी मचकौ न हहा लचकै करिहाँ मचकै मिचकी
-- {2}

फाग की खेलती नायिका का उदाहरण है -

भाग को भीर अभीर नि है गोविद लै गयी भीतर गोरी,
भाई करी मन को पद्माकर ऊपर नाई अबीर की झोरी ।
छीन पीताम्बर कम्मरते सुविदा दई मीड़ि कपोलन रोरी,
नैन नचाई कह्यौ मुसकाई हमलां फिरि आइयो खेलन होरी ।।

पद्माकर ने नारी को विलासोपयुक्त सामग्रियो के साथ सजा कर रख दिया ब्रा रूपिणी नारी अन्त: करण का श्रृंगार न

{1} जगद्विनोद - 232
" - 227
" - 464

बनकर इन्द्रियों का उपहार बन गयी सुख और विलास की सामग्री के रूप में सजी ।

गुलगुली गिल में गलीचा हैं गुनीजन हैं,
चाँदनी हैं चिके है चिरागन की माला है ।
कहै पद्माकर त्यों गजक गिजा है सजी,
सेज है, सुराही है सुरा है और प्याला है ।
शिशिर के पाला को न व्यापत कसाला तिन्हें,
जिनके समीप ऐसे उदित मसाला है ।
तान तुक ताला है विनोद के मसाला है ,
"सुबाला" है दुशाला है विशाला चित्रशाला है ।।

चतुर्थ : अध्याय

नारियों का वर्गीकरण

उच्च वर्ग

निम्न वर्ग

नारियों का वर्गीकरण -

सांस्कृतिक दृष्टि से देव का नारी निरूपण महत्वपूर्ण है सामाजिक दृष्टि से नायिकाओं का विभाजन शास्त्रीय विधान से गौण था प्रेम के प्रसंगो, काम चेष्टाओं रीति-रीति मान विरह आदि के आधार पर ही नायिकाओं का निरूपण काव्य शास्त्रीय परम्परा की विशेषता रही ।

कवि कल्पना ने इन्हीं की सूक्ष्म और स्थूल रेखाओं से नायिका चित्र खड़ा किया । पर समाज की रसिक दृष्टि इस सीमित नारी वर्ग से हटा नहीं सभी देश और जाति की विशेषताओं से युक्त नारियों का वर्णन इतना विस्तृत था कि रीतिकाल के अधिकांश आचार्यों ने इसका स्पर्श नहीं किया नारियों के अनंत भेद हो सकते हैं ।

केवल देव ने नारियों का विस्तृत वर्णन किया है ।

उच्च वर्गीय - नारियों में ब्रह्माणी, क्षत्राणी, राजपूतानी, खतरानी वैश्यानी कायस्तिनी आदि का समावेश देव ने किया है । क्षत्राणी माय ब्राह्मण आदि के रक्षक क्षत्रिय की गुण वती वधू के रूप में मान्य है

क्षत्रिय जाति अपने शौर्य और मर्यादा प्रेम के लिए इतिहास प्रसिद्ध रही है । क्षत्राणी को यही जातीय विशेषता वर्णित है । छतरानी का भी कुछ ढका छुपा वर्णन मिलता है ।

उदाहरण प्रस्तुत करना चाहूँगी -

छतरानी

ज्यों बिबहो गुन अंक लिखै धनु यो करि कै करता करि हार्‌यो ।
बारियो कोरि सची रति-रानी, इतो छतरानी को रूप निहारियो
देव सु बानक देखि अचानक आन कहूँ न को आन कुमार्‌यो ।
लाज लवै त्रिय और रवै तो पवै बिन काज विरंचि बिगार्‌यो

पर वैश्यानी और कायस्थिनि सुनारिनि आदि के वर्णन में घोर श्रृंगारिकता मिलती है । इन जातियों का सौन्दर्य चित्रण निस्संकोच भाव से मिलता है । कुछ उदाहरण प्रस्तुत करना चाहूँगी -

वैश्यानी

पीर पीन कुचनि पै कंचुकी बदन कसो निकसी निकाई परै सूहे की
छुहाती मैं ।
गोरे गरे तरे लटै मोतिन की तामें झमकति-झुकझुकी जैसे दूलह बराती मैं
देव चित चुभै देख इन भुजै बाजूबन्द ललकत लाल लगिबे को रंगराती मैं
नव जोबनी की जोब नीको जोति जीति रही कैसी बनी नीकी बनि
नीकी छवि छाती मैं

काइथिनी

रीझे रिझवारि इंदु वदनी उदार सुर रुख की सी डार डोलै रंग
राखियानि मैं ।
साँवरी सलौनी गुनवती गजगौनी महासुन्दर सुघट लाख लाख
लखियानि मैं ।
जागी सब रैनि बझागो पिय प्यारे संग प्रेमरस पागी अनुरागी
सखियानि मैं ।
दारदौं से दसन मन्द हँसन पिसद भरी सद भरी शोभा मद भरी
आँखियानि मैं । ।

निम्न वर्गीय नारियाँ -

इसके पश्चात् निम्न वर्गीय नारियाँ आती हैं । अतीस कठिन कलारिन कहारिन नुनेरी को सम्मिलित किया गया है । कलारिन मधु बेचने वाली होती है । वह स्वयं पीती और दूसरो को भी पिलाती है । उसके मादक यौवन का चित्रण मदिरा के कारण और भी मादक बन गया है ।

कुहारिन का जोबन भी जगमगा रहा है ।

कुहारिन

जगमगे जोबन जगीं है रंग मती जोति लाल लहँगा
पै लीली ओढ़नी बहार की

झाड की अदरिया में सफरी फरफरात बेंधति

फिरति बोले बानी मनुहार को ।

चाहेऊ न चाहें चढ़ै ओट ते गहत बाहें गाहक

उमाहे रोकि राहैं चित हार को ।

देखत ही मुख विष लहरि सी आवैं लगी

कहर लौं नैन कहै कहर कहार को ।

नाइन तो युवको को मोहित करने की चेष्टा में ही है -

घर घर डोलत सुहर नर मोहिबे को ।

अधरो फिरत सब मुख सुख देनियो ।।

इसी प्रकार मालिन और धोबिन भी अपने रूप रंग से

सभी को मोहित करती रहती है ।

धोबिन

धार पर ठाढ़ी बात धारति बतोहिनी को चेटक सी डोटि मन काको न हरति है

लटकि पटकि पट छियो करि मटकति देव मुख मूलनि के फूल से झरति है ।

जीवन की रेल अठिलात लो उछाहें कुच ओठनि अमेठि पर रैठि के धरति है ।

धोबिन अनोखो यह धोवति कहाधौं करि सुध बुध राखति न आम करति है ।

इसके पश्चात् निम्न वर्ग की नारियों के अहीरिन, गंधीन, चूहरी, तोलिन, पटवीन आदि का उदाहरण करना चाहूँगी ।

अहीरिन

माखन सो मन दूध सो जोबन है दधि ते अधिकै उर ईठी ।
छैल रंगीली को छाछि के आगे सगेत सुधा बसुधा सब सीठी ।।
नैननि नेह चुवै कवि देव बुझावत बैन वियोग अंगीठी ।
ऐसी रसीली अहीनी अहै कहौ क्यों न लगै मनमोहन मीठी ।।

गंधीन

अरगजै भीजी मरगजै बागे बनीठनी हाटि पर बैठी अति हो सुधरपन सों ।
इन्दु सो बदन मृगमद बिन्दु बेंदी भाल झलकै कपोल गोल दूने दरपन सों ।।
मैन मद छाके मैन देखे देव मुनि मोहैं सोहैं सतकारे ।
बंधु किय मधुप मदन्ध किय पुरजन बांध्यो मनु गन्धी को सुगन्ध बरषन सों।

चूहरी

चीकने कपोल चोका चमकै चुनी से दन्त चंचल
दृगचलीन चितचौन चौंकनी ।

कंचुकी में फसे कुच कंचन कली से झीने अंचल को ओट झाइरंचक उझकनी ।
चटकीली चूनरी में चोट सी चलावै भौंटे पेटक सी चालि पग चूनी पर कंकनी
फूल से झरत रंग झर लागे झारू देत फूहरो चतुर चित चोरीन चमंकनी ।।

तैलिन

तिल है अमोल लोल नैनी के कपोल बीच कोटिक अनूप रूप वारि फेरियतु है।
शोभा सुने जाको कवि देव कहै कौन को न होत चित चोकनों चतुर चेरियतु है
घाट बाह्टू में घट निपट बटोहिनी के नेक ही निहारे नेह भरे हेरियतु है ।
सरस निरान ताके परस की कौन कहै चोन्हूं के परस करोसो पेरियतु है ।।

पटविन

रेसम के गुन छीलि छरा करि छोर ते छैंच सनेह रचावै ।
देव दसौं अंगुरी उरझाई कै डोरो गुहै रस रंग मचावै ।।
मोहति सो मन पोहति सी जन छोहति सो तनि भौंह नचावै ।
चंचल नैननि सैननि सौं पटवा को बहू नटवा सो नचावै ।।

पंचम : अध्याय

नायिका-भेद

नायिका भेद -

रीतिकालीन कवियों ने अपनी रचनाओं में श्रृंगार रस का सारा विस्तार आलम्बन विभाव के अन्तर्गत नायिकाओं के भेदोपभेद को लेकर खड़े किये ? जिससे कि रचनाकार अपने पात्रों के शील मर्यादा को आदि से अन्त तक उचित रीति से निर्वाह कर सके । परन्तु बाद में जब रस की प्रतिष्ठा हो गयी और रसों में श्रृंगार रस का राजत्व प्राप्त हो गया तो श्रृंगार के आलम्बन रूप नायक-नायिका को भी महत्व दिया जाने लगा ।

नायिका भेद का सर्वप्रथम निरूपण भरत के नाट्यशास्त्र के 22वें अध्याय में नायिका भेद की समस्त सामग्री उपलब्ध होती है । आचार्य भरतमुनि के बाद रूद्र, भोजराज भानुमिश्र तथा संस्कृत के अन्तिम काव्याचार्य थे सन्त अकबर शाह ।

रीतिकाल में नायिका भेद का विकास

हिन्दी रीतिशास्त्र में नायक-नायिका भेद का विषय रस और विशेष रूप में श्रृंगार रस के अन्तर्गत ही लिया गया है । संस्कृत की अपेक्षा हिन्दी में नायिका भेद को अधिक विस्तार से लिया गया है । सम्पूर्ण रीतिकाल में विषय विवेचन की दृष्टि से यह विषय कदाचित ही किसी आचार्य से अछूता नहीं रहा । जिसने नायिका भेद पर नवीन उदाहरण न दिया हो आचार्यों ने नायिका भेद विषय को इतना

अधिक महत्वपूर्ण बना दिया । कि आधुनिक काल तक नवीन उदाहरण जोड़े गये ।

नायिका भेद का हिन्दी में कालक्रमानुसार सम्बद्ध ग्रन्थ प्रस्तुत किया जा रहा है ।

"कृपाराम की हित तरंगिनी {1541 ई0}, सूरदास की साहित्य लहरी {1550}, नन्दलाल की रसमंजरी {1566ई0}, केशव दास की रसिकप्रिया {1591ई0}, रहीम की बरवै नायिका भेद{1600ई0}, सुन्दर की सुन्दर श्रृंगार {1631ई0}, तोष की सुधानिधि {1634ई0}, चिन्तामणि की कविकुल कल्पत {1650ई0}, जसवन्त सिंह का भाषा भूषण, मतिराम की रसराज, कुमारमणि शास्त्री का रसिक रसाल {1719ई0 देव का भाव विलास, रस विलास, भवानी विलास, तथा सुख सागर तरंग, रसलीन का रस प्रबोध, भिखारी दास का श्रृंगार निर्णय, ब्रहमदंत का दीप प्रकाश, प्रताप नारायण का रसकुसुमाकर {1872ई0}, हरिऔध का रसकलश {1937ई0}, गुलाबराय का नवरस {1934ई0}, बिहारी लाल भट्ट का साहित्यसागर {1937ई0}, कन्हैयालाल पोद्दार का काव्य कल्पद्रुम {1941ई0}, और प्रभुदयाल मीतल का ब्रजभाषा साहित्य का नायिका भेद {1948ई0} ।" {1}

{1} हिन्दी साहित्य कोश, भाग ।

पृष्ठ संख्या -432

नायिका भेद के विकासक्रम में रीतिकाल के कतिपय प्रमुख ग्रन्थों और उनके योगदान का विवरण प्रस्तुत कर रही हूँ -

कृपाराम हिततरंगिनी रीतिकाव्य में नायिका भेद विषयक पहला ग्रन्थ है हिततरंगिनी पर अन्य पूर्ववर्ती संस्कृत आचार्यों के अलावा भानुदत्त का प्रभाव है कृपाराम ने स्वकीया, परकीया तथा सामान्या तीन प्रकार की नायिकाओं का उल्लेख किया है । स्वकीया के मुग्धा, मध्या तथा प्रौढ़ा तीन भेद किये है मुग्धा के चार उपभेद अज्ञातयौवना ज्ञातयौवना नवोढ़ा और विश्रब्ध नवोढ़ा बाद में प्रचलित हुए परन्तु नवोढ़ा के ललिता और उदितयौवना नामक उपभेद तथा मध्या के साधारण मध्या और अति विश्रब्ध नवोढ़ा मध्या उपभेदों को मान्यता नहीं मिली इसी प्रकार परकीया नायिका के ऊढ़ा तथा अनूढ़ा भेद तो सर्वमान्य हुए, किन्तु ऊढ़ा के परप्रिया और पर विवाहिता उपभेद मान्य नहीं हो सके परकीया के सात भेदों मे से , लक्षिता, विदग्धा, कुलटा, मुदिता अनुशयना, सुरतिगोपना और स्वयं, दूतिका भेद किये गये । सामान्या तथा उसके उपभेदों को भो विशेष मान्यता परवर्ती काल में नहीं है ।

इसमें उत्तमा मध्यमा तथा अधमा अन्य संभोग दुखिता, गर्विता के अन्तर्गत वक्रोक्ति और सरलौकिक के भी रूपगर्विता, गुण गर्विता और प्रेमगर्विता जैसे विस्तृत भेद परवर्ती काल में किये गये जो समयान्तर में स्वीकृत नहीं हुए ।

नायिका भेद विषयक कवि रहीम का पूरा नाम अब्दुर्रहीम खान खाना था । मुसलमान होते हुए भी भारतीय संस्कृति के प्रति आत्म समर्पण सराहनीय तथा अद्वितीय है रहीम का बरवा नायिका भेद उनके काव्यशास्त्र की परख तथा श्रृंगार रस की मर्मज्ञता का परिचायक है । जन साधारण उनके नीति तथा भक्ति विषयक दोहे ही प्रचलित है ।

बरवा नायिका भेद की सर्वप्रथम विशेषता उसका अवधी में होना है जो उस समय ब्रज के अतिरिक्त अन्य क्षेत्र की भाषा थी । कुल बरवै की संख्या ।।5 है ग्रन्थ में स्वकीया के विविध भेदो के साथ परकीया नायिका के ऊढ़ा अनूढ़ा, गुप्ता इत्यादि प्रसिद्ध छ: भेदो तथा गुप्ता के सभी भूत, वर्तमान तथा भविष्य सुरति संगोपना वचन विदग्धा क्रिया विदग्धा प्रथम द्वितीय तथा तृतीय गणिका के बारे में चर्चा हुयी है ।

इसमें अन्त में उत्तमा मध्यमा तथा अधमा नायिकाओं का भी विभाजन दे दिया गया है इसमें एक अभाव यह है कि दशानुसार वर्गीकरण में अन्य सुरति दुःखिता तथा वक्रोक्ति गर्विता के साथ यहाँ प्रेम गर्विता तथा रूप गर्विता का उल्लेख होता है, वहाँ मानवती की कोई चर्चा नहीं की गयी। निश्चय ही बरवा नायिका भेद रीति काव्य की एक सफल कृति है।

आचार्य केशवदास ही नायिका भेद शास्त्र के सर्वप्रथम आचार्य हैं केशवदास ने संस्कृत परम्परा के आधार पर ही काव्य शास्त्र का विवेचन हिन्दी में रखा था। रसिक प्रिया में काम शास्त्र तथा संस्कृत ग्रन्थों की परम्परा के अनुसार प्रारंभ में नायिका के पद्मिनी चित्रिनी शंखिनी तथा हस्तिनी इस प्रकार के चार भेद किये गये हैं।

स्वकीया के अन्तर्गत मुग्धा मध्या और प्रौढ़ा नायिकाएं और फिर प्रत्येक के चार भेद किये गये है ज्येष्ठा तथा कनिष्ठा की चर्चा केशवदास ने नहीं की परकीया ने ऊढ़ा और अनूढ़ा भेद की तो किये गये है किन्तु अन्य छ: भेदो तथा गणिका की भी चर्चा नहीं हुयी है । भरमुनि की नायिकाओं के आठ भेद किये गये है इनके भी मुग्धा मध्या प्रौढ़ा परकीया तथा सामान्या जैसे हिन्दी में प्रचलित भेद न देकर प्रच्छन्न तथा प्रकाश ऐसे प्रत्येक नायिका के दो-दो भेद किये गये है उनमें केवल कृष्णाभिसारिका कामाभिसारिका जैसे भेद परवर्ती काल में मान्य नहीं हुए । दूसरी ओर अन्य तीन प्रचलित भेद अन्य संभोग दु:खिता, गर्विता, मानवती का उल्लेख रसिकप्रिया में नहीं हुआ । अन्त में उत्तमा मध्यमा तथा अधमा नायिकाओं को मिलाकर रसिक प्रिया में नायिकाओं की संख्या कुल मिलाकर360 है जिसे केशवदास ने स्वयं स्वीकार किया है । §1§

---

§1§ केशवदास सुतीनि विधि बरनी सुकिया नारि ।
परकीया के भांति पुनि आठ-आठ अनुहारि ।।
उत्तम मध्यम अधम अरु तीन-तीन विधि जान ।
प्रगट तीन-तीन से साठि, तिय, केशवदास बखान ।।

चिन्तामणि का कवि कुलकल्पतरु परम्परा तथा सरलता की दृष्टि से यह ग्रन्थ अधिक महत्वपूर्ण है । इस ग्रन्थ में काव्य-शास्त्र के सभी अंगों की चर्चा हुयी ह । चिन्तामणि ने प्रारंभ में नायिका के दिव्य अदिव्य और दिव्यादिव्य जैसे जो भेद किये हैं, वे मौलिक है । चिन्तामणि ने कविकल्पतरु में स्वकीया, परकीया, सामान्या भेदों मे स्वकीया के तीन भेद मुग्धा मध्या प्रौढ़ा के और फिर मुग्धा के छ: भेद, मध्या के चार भेद तथा प्रौढ़ा के चार भेद किये है । जिसके स्वतंत्र नाम हैं । इसमें धीरादि भेद तथा ज्येष्ठा और कनिष्ठा भेद भी दिये गये है । इसमे सामान्या का भी वर्णन करते हुए आठ प्रकार की नायिकाएं बताई गयी है । जिनमे मुग्धा मध्या प्रौढ़ा परकीया तथा सामान्या है । इसमें प्रवच्छत् पतिका और आगत पतिका के भेद नहीं दिये गये है अन्तिम मे उत्तमा, मध्यमा और अधमा नायिकाएं दी गई है ।

मतिराम अपनी सरसता श्रृंगारिकता तथा आचार्यत्व में अद्वितीय है इनका सुप्रसिद्ध नायिका भेद सम्बन्धी ग्रन्थ नायिकाओं के क्रमानुसार वर्गीकरण तथा स्पष्ट एवं सुबोध उदाहरणों की दृष्टि से महत्वपूर्ण ग्रन्थ है ।

रसराज में नायिका के स्वकीया परकीया तथा गणिका के तीन भेद क्रमानुसार किये गये है । स्वकीया के मुग्धा, मध्या तथा प्रौढ़ा भेद दिये गये हैं । मुग्धा के अज्ञात यौवना तथा ज्ञात यौवना दो भेद देकर ज्ञात यौवना के नवोढ़ा तथा विश्रब्ध नवोढ़ा भेद किये गये है मध्या प्रौढ़ा का कोई विस्तार मतिराम ने नहीं किया है । उनके धीराधीरा इत्यादि भेद अवश्य किया हैं ।

ज्येष्ठा कनिष्ठा के उदाहरण भी अच्छे है । परकीया नायिका के ऊढ़ा, अनूढ़ा तथा गुप्ता जैसे छ: भेद दिये गये हैं । गणिका का वर्णन भी मतिराम ने किया है । तीन प्रकार की अन्य संभोग दु:खिता तथा दस प्रकार को प्रेषित पतिका इत्यादि उत्तमा मध्यमा अधमा जैसी नायिकाओं की चर्चा हुयी है । मतिराम ने मुग्धा, मध्या, प्रौढ़ा परकीया तथा सामान्या के आधार पर भी नायिकाओं का वर्गीकरण किया इन सभी भेदों तथा उपभेदों के उदाहरण अत्यन्त सरल सरस तथा स्पष्ट है ।

महाकवि देव ने काव्यशास्त्र के सभी अंगो की विवेचना की है । इनके प्रसिद्ध ग्रन्थ नायिका भेद सम्बन्ध भाव विलास, भवानी विलास सुजान विनोद प्रेमतरंग रसविलास जातिविलास, कुशल विलास, काव्य रसायन सुखसागर तरंग तथा अष्टायान मुख्य है ।

देव के इन सभी ग्रन्थो में श्रृंगार तथा नायिका भेद की चर्चा हुयी है । किन्तु मुख्य रूप से "भाव विलास" के चतुर्थ विलास मे नायिका भेद का सांगोपाग निरूपण हुआ है । जिसमें देव ने नायिकाओं के 381 भेद दिये है । नायिका भेद को लेकर लिखा गया इनका मुख्य ग्रन्थ "रसविलास" है तथा उनके सुखसागर तरंग नामक ग्रन्थ को तो डा० नगेन्द्र ने नायिका भेद का एक विश्वकोश ही माना है । अष्टायाम इसी ग्रन्थ का एक अंग भी है । "भवानी विलास" के सात विलासो में भी इसी की चर्चा है । "सुमिल विनोद" के आठ विनोद भी इसी विषय से सम्बद्ध है । काव्य रसायन के षष्ठ प्रकाश में नायिका भेद का वर्णन संक्षिप्त शैली में हुआ है ।

बृजभाषा में प्राप्त नायिका भेद के इन ग्रन्थों के अतिरिक्त श्री प्रभुदयाल मीतल ने उनके एक अन्य सुसंस्कृत ग्रन्थ "श्रृंगार विलासिनी" का भी प्राप्त होने का उल्लेख करते हुए, इसके सम्बन्ध में लिखा है -- "इसमें भी विशेष कर नायिका भेद का भी वर्णन है । यह ग्रन्थ सम्वत् 1757 वि0 में दक्षिण भारत में कोंकण प्रदेश में लिखा गया है । इस ग्रन्थ की यह विशेषता है कि संस्कृत में लिखा होने पर भी इसकी रचना हिन्दी छन्द छप्पय, सवैया दोहा आदि में हुयी है हिन्दी छन्द शास्त्र के नियमानुसार पदों के अन्त मे तुक भी मिलाई गई है । इस ग्रन्थ से देव कवि का संस्कृत काव्य-रचना पर भी पर्याप्त अधिकार ज्ञात होता है । { 1 }

देव ने नायिकाओं के भेद प्रभेद का बड़ा वैज्ञानिक वर्गीकरण रसविलास में किया है । उन्हें जाति कर्म गुण देश

{ 1 } बृजभाषा साहित्य का नायिका भेद, पृष्ठ सं0 115, 116

श्री प्रभुदयाल मीतल

काल वय प्रकृति तथा सत्व के आधार पर आठ वर्गों में विभाजित किया गया है और इनके भी उपवर्ग किये गये है जातिवर्ग मे पद्मिनी शंखिनी चित्रनी और हस्तिनी का वर्णन हुआ है । कर्मवर्ग में स्वकीया परकीया तथा गणिका भेदो में स्वकीया के ज्येष्ठा तथा कनिष्ठा भेदो के अतिरिक्त अंश भेद के आधार पर वयक्रम के अनुसार निम्नलिखित पाँच उपभेद किये गये है :-

§1§ देवी §7वर्ष§

§2§ देवगंधर्वी §14वर्ष§

§3§ गंधर्वी §21वर्ष§

§4§ गंधर्व मानुषी §28वर्ष§

§5§ मानुषी §35वर्ष§

देव ने परकीया के अनूढा और ऊढा भेदा मे ऊढा के अन्तर्गत गुप्ता इत्यादि छह भेद किये है देव कवि का देश-वर्ग के आधार पर विविध देशों की स्त्रियों का सूक्ष्म वर्णन नवीन है। काल वर्ग मे प्रसिद्ध आठ भेद हुए है । वयक्रम वर्ग में मुग्धा मध्या, प्रौढा तथा महाकवि देव ने मानो रीति साहित्य के नायिका भेद को एक मौलिक दिशा प्रदान दी है । उनके मुग्धा उपभेद के प्रभेदों मे ही ले । मुग्धा की आयु उनके अनुसार 12 वर्ष

से 16 वर्ष के मध्य मानी गयी है ।

इसके प्रभेद इस प्रकार है :-

§1§ वय सन्धि अर्थात् अज्ञात यौवना 12-13 वर्ष ।

§2§ नवल वधू 13 वर्ष ।

§3§ नव यौवना 14 वर्ष ।

§4§ नवल वधू तथा नवयौवना को ज्ञात यौवना भी कहा गया है ।

§5§ नवल अनंगा अर्थात् नवोढ़ा 15 वर्ष ।

§6§ सलज्जरति अर्थात् विश्रब्धनवोढ़ा 16 वर्ष

इसी प्रकार मध्या के 4 उपभेद रूढ़ यौवना, प्रगट मनोज, प्रगल्भ वचना और विचित्र सुरता तथा प्रौढ़ा के भी 4 उपभेद लब्धा-पति, रति को विदा, आक्रान्ता तथा सविभ्रमा ।

एक-एक वर्ष की अवस्था के अन्तर से अन्तिम 24 वर्ष की अवस्था तक के उपभेद दिये गये हैं । इस विभाजन में छठ वर्ग मध्या प्रौढ़ा मान का है, जिसमें धीरा धीरा इत्यादि का उल्लेख हुआ है । सप्तक्रम प्रकृति वर्ग में शरीर के त्रिदोष कफ पित्त वात के अ आधार पर विभाजन है । अन्त में आठवें सत्व वर्ग में देव; मनुष्य आदि के आधार पर नौ भेद देकर देव ने अपने नायिका भेद को अधिक पूर्ण वैज्ञानिक तथा सांगोपांग बना दिया है उन्होंने पर रतिदुःखिता, प्रेमगर्विता, रूपगर्विता तथा मानिनी नायिकाओं के भी उदाहरण हैं ।

रस विलास रचना में तो देव ने नागरी पुरवालिन, ग्रामीणा, वनवालिन, सैन्या तथा परिकीतिय जैसे भेद देकर भी विस्तृत उपभेद दिये हैं उनका नायिका भेद विस्तार मौलिकता तथा नवीनता सभी दृष्टियों से महत्वपूर्ण है ।

रसलीन का रसप्रबोध तथा अंगदर्पण में नायिका भेद के साथ रस निरूपण भी हुआ है । रस प्रबोध में कुल 1155 दोहे हैं रस का मूलकारण भाव को ही ठहराते हुए भाव विभाव, अनुभाव, संचारी भाव का वर्णन किया गया है । रसों में भी प्रमुख श्रृंगार और उसके आलम्बन नायिका भेद को रसलीन ने बड़े विस्तार से चर्चा की है । उन्होंने विभाव प्रकरण के अन्तर्गत सखी दूती तथा षटऋतु का भी वर्णन किया है । अनुभाव में हाव तथा सात्विक भाव और संचारी भावभेद तथा रसभेद का वर्णन किया गया है । श्रृंगार के दो भेद संयोग तथा वियोग निरूपण के साथ अन्य रसों की भी चर्चा हुयी है ।

रसलीन ने नवीन नायिकाओं के उदाहरण देते हुए कुल 1352 प्रकार की नायिकाओं दी है । रस प्रबोध में सर्व प्रथम स्वकीया, परकीया तथा गणिका भेद देकर स्वकीया के मुग्धा मध्या प्रौढ़ा और फिर मुग्धा के पाँच, मध्या के चार प्रौढ़ा ~~और~~ के छः भेद किये गये है स्वकीया वर्णन में धीरादि भेद भी दिए गए हैं परकीया के ऊढ़ा अनूढ़ा भेदों के भी प्रत्येक के दो-दो भेद उद्‌बुद्धा तथा उद्‌बोधिता नाम से किये गये हैं परकीया के असाध्या और सुखसाध्या दो भेद हुए हैं ।

रसलीन ने नायिका भेद में उन्होंने स्वकीया तथा परकीया के कामवती, अनुरागिनी तथा प्रेमासाक्ता ये तीन नवीन भेद किये गये है । सामान्या के चार भेदों में से स्वतंत्र जननी अधीना नेमता तथा प्रेमादुःखिता है परकीया तथा सामान्य का विस्तार भी इनकी एक विशेषता हैं किन्तु सबसे बड़ी विशेषता नायिका भेद की दृष्टि से रसलीन की यह है कि इन्होंने दस प्रकार का नायिकाओं की मनोदशा के आधार पर क्रमबद्ध वर्णन किया हैं जो कि ब्रजभाषा के अन्य किसी भी कवि ने इनके पूर्व नहीं किया । रसलीन का नायिका भेद सरसता की दृष्टि से तो उतना महत्त्वपूर्ण नहीं है, किन्तु आचार्यत्व तथा विस्तार की दृष्टि से नायिका भेद के विकास में उसका एक विशेष स्थान है ।

नायिका भेद की दृष्टि से भिखारी दास का शृंगार निर्णय नामक ग्रन्थ महत्वपूर्ण है । उन्होंने आत्म धर्मानुसार स्वकीया तथा परकीया भेद करते हुए सामान्या की चर्चा भी नहीं की है । स्वकीया के पतिव्रता, उदाहरण तथा माधुर्य भेद करते हुए ज्येष्ठा तथा कनिष्ठा के छः भेद करते हुए दास ने इस भेद का सर्वप्रथम विस्तार किया है । परकीया के प्रगल्भा और धीरा दो भेद देते हुए अनूढ़ा, ऊढ़ा दो भेद देकर अनूढ़ा के उद्बुद्धा और उद्बोधिता में उद्बुद्धा के अनुरागिनी तथा प्रेमासक्ता नामक दो भेद किये है ऊढ़ा के असाध्या, दुःख-साध्या और साध्या तीन भेद, इसी प्रकार फिर विदग्धा लक्षिता मुदिता और अनुशयना चार भेद किये गये है इनका गुप्ता नायिका विदग्धा में ही समाहित हो गयो है ।

अवस्थानुसार के द्वितीय वर्गीकरण में मुग्धा मध्या और प्रौढ़ा तीन भेद स्वकीया और परकीया दोनों में ही किये गये है इसी प्रकार इन दोनों के भी ज्ञात यौवना और अज्ञात यौवना भेद किये गये है ।

अष्ट नायिकाओं के तृतीय वर्गीकरण में स्वाधीनपतिका में रूपगर्विता, प्रेमगर्विता तथा गुनगर्विता का वर्णन हुआ है । वास कसज्जा के अन्तर्गत आगतपतिका का विचार हुआ है । अभिसारिका के दो भेद कृष्ण तथा शुक्ला हुए है । वियोग श्रृंगार के अन्तर्गत उत्कंठिता खण्डिता, कलहांतरिका, विप्रलब्धा और प्रोषितभतृका पांच भेद किये गये है । खंडिता तथा कालहांतरिका में मानभेद आया है । अन्य संभोग दुखिता को विप्रलब्धा के अन्तर्गत समाहित किया गया इसी प्रकार प्रवत्सत्यप्रेयसी, आगच्छपतिका तथा आगतपतिका को प्रोषित भतृका के अन्तर्मुक्त किया गया है ।

उन्मादिर नायिकाओं का चतुर्थ वर्ग साधारण है ।
नायिका भेद के वर्गीकरण में नवीन नायिकओं की
देन में दास कवि स्वतंत्र एवं मौलिक है रीति साहित्य
में उनका यह क्रम अन्य कवियों की अपेक्षा अधिक
वैज्ञानिक माना जाता है । पद्माकर का जगद्विनोद -
भाषा की सरसता तथा कमनीय कल्पना के विलक्षण
संयोग मे मतिराम से विशेष प्रभावित भी है नायिका
भेद के क्षेत्र में यह बात और भी लागू होती है ।
दोनों का क्रम भी एक सा है पद्माकर ने केवल
प्रौढ़ा के रतिप्रीता तथा आनंदसमोहिता भेद
अधिक दे दिये है ।

नायिका भेद का मुख्य आधार श्रृंगारिकता है तो उसका मुख्य प्रतिपाद्य नायिका भेद ही है । इस स्थान पर इसकी चर्चा भी आवश्यक है । आश्रयदाता की प्रशंसा के लिए, राजदरबार में वाहवाही के लिए, परम्परा से आती हुए भारतीय चिन्तनधारा में पुरूष तथा प्रकृति को अभिव्यक्ति के लिए रमणी/रमणीय तथा प्रकृति की अपनी रूपासक्ति के लिए कवियों ने नारी के जिस रमणीय रूप की कल्पना मे विविध आभूषणो और अलंकारो से रीतिकाव्य में चार चांद लगा दिये है वह नायिका भेद ही है जिस सुन्दरी के अवलोकन से श्रृंगार रस का संचार हो वही नायिका है । मतिराम तथा पद्माकर दोनों ने ही इसी बात की पुष्टि की है । §1§

---

§1§ उपजत जाहि विलोकि के, चित बीच रसभाव ।
ताहि बखानत नाइका, जे प्रवीन कविराज ।। -- रसराज

रस-सिंगार को भाव उर उपजत जाहि निहारि ।
ताही को कवि नाइका, बरनत विविध विचारि ।। -- जगद्विनोद

नायिका का विशद् परिचय एक कवि ने निम्नलिखित शब्दों में दिया है । रीतिकाल की नायिका अत्यन्त सुन्दर गुणवती, अत्यन्त कोमल और आकर्षण है । उसका सौन्दर्य अनिवर्चनीय है । तभी तो आकाश, पाताल, भूलोक और जलस्थल के सभी जन उसे देखकर रीझ जाते है । उस पद्मिनी नायिका के अंग प्रत्यंग से सुगंध फैलती है । जिसे देखकर आकाश, जल और थल अर्थात् तीनों लोको के प्राणी मुग्ध हो जाते हैं । निश्चय ही उस नायिका में एक लौकिकता है, जो उसे साधारण लौकिक नायिका से परे असंसारी दिशा प्रदान करती है ।

यहाँ यह ध्यान देने की बात है कि रीतिकाल के कवियों की उच्च श्रेणी ने नायिका के चित्रण में भारतीय दर्शन को प्रकृति और उसके विराट स्वरूप तथा उसके परिप्रेक्ष्य में पुरुष को भी विस्मृत नहीं किया है । केशव, देव §1§ और बिहारी के नायिका चित्रण में तो यह बात स्थान-स्थान पर अधिक स्पष्ट ही उठती है भारतीय परम्परा के प्रति आत्म सचेतन इन कवियों ने तो ब्रह्म और माया की क्रीड़ा का स्पष्टीकरण, आवरण, विक्षेप प्रतिबिम्ब बाद तथा अभेद युगल स्वरूप मे जीव और ब्रह्म की एकता पानी मे की "लोन जैसी युक्तियों द्वारा भली प्रकार किया गया है ।

---

§1§ माया देवी नायिका ,नायक पुरुष आप ।
सबै दम्पत्ति में प्रकट, देव को तिहि बाप ।।
प्रेमसागर तरंग दे०

इस सम्बन्ध में केवल मामा और ब्रहम को ही बात नहीं नायिका भेद के चित्रण में विशिष्ट भारतीय गृहिणी के स्वरूप को भी नहीं भुलाया गया है । और जैसा कि इसके पूर्व कहा गया है रीतियुगीन काव्य में नायिका भेद का नारी चित्रण हलका और बाजारू ढंग का नहीं है वह तो एक सरल गार्हस्थित जीवन की परम्पराओं का रसिक रूप है ।

नायिका को सजाने संवारने में उसके प्रियतम ने अनेक विधान किये, किन्तु चूंकि भारतीय परम्परा में स्त्री को अपने पति द्वारा चरण स्पर्श कराना मात्र अपराध ही नहीं एक पाप भी माना जाता है । इसलिए स्त्री ने सब कुछ तो करने दिया किन्तु उनके द्वारा पैर में महावर देते समय आपत्ति की और कहा कि - "प्रानपति ! यह अति अनुचित है । सेनापति की सरसता और मर्यादा का वैशिष्टय दृष्टव्य है -

फूलन सो बाल की बनाए गुही बेनी लाल,
भाल दीन्हीं बेंदी मृगमद को असित है ।
अंग-अंग भूषन बनाए ब्रजभूषन जू,
बीरी निज कर ले खवाई अति हित है ।।
हूब के रसबस जब दीबे को महावर के
सेनापति स्याम गह्यो चरन ललित है ।
चूमि हाथ नाथ के लगाइ रही आंखिन सों,
कही, प्रानपति ! यह अति अनुचित है ।।

नायिका के रूप सौन्दर्य मे उत्तरोत्तर प्रतिक्षण नवीनता आती है । साधारणतया लौकिक वस्तुओं के रूप की एक सीमा है । उनके विकास मे परवर्ती हास के लक्षण पाये जाते है, किन्तु मतिराम की नायिका का सहज सौन्दर्य जितना ही निकट से देखा जाता है । उतना ही अधिक बढ़ता जाता है -

कुन्दन को रंग फीको लगै, झलके अति अंगन चारु गोराई ।
आँखिन मे अलसानि चितौनि मे मंजु विलासन की सरसाई ।।
को बिन मोल बिकात नहीं, मतिराम लहै मुसुकानि मिठाई ।
ज्यों-ज्यों निहारिए नेरे ह्वै नैननि, त्यों-त्यों खरी निकरै सी निकाई

नायिका के यथार्थ रूप-वर्णन और उसके प्रभाव का चित्रण घनानंद के काव्य में प्राप्त होता है । लज्जा से अवेष्ठित भेदभाव भरी चितवन जो चंचल बांके नेत्रों में शोभित है । शोभा का आगार वह गौरवर्णा नायिका, जिसका ललाट सुन्दर है, उसके भीने पन से मुस्कुरा देने में रस निचुड़ता है । वह हंस देती है तो शुभ्र दांतों की चमक मानों वक्षस्थल पर मोतियों की माला जैसी फैली है । वह बड़े लाडले ढंग से प्रियतम से बातें करने में अनुरक्त है ।

आनन्द की निधि वह छबीली बाला जब कभी मुड़ती है तो उसके मुड़ जाने पर कामदेव का रंग अर्थात् यौवन उसके अंगों को जगमगा देता है -- उसके रूप को अधिक स्पष्ट करता है -

लाजनि लपेटी, चितवनि-भेद-भाव भरी,
लसत ललित लोल चख तिरछानि में ।
छवि को सदन गोरो बदन, रुचिर भालि,
रस निचुरत मीठी मृदु मुसक्यानि में ।
दसन-दमक फैलि दियें मोती-माल होत,
पिय सों लड़कि प्रेम पगी बतरानि में ।
आनंद की निधि जग-मगति छबीली बाल,
अंगनि अनंग-रंग दुरि मुर जानि में ।।

नायिका भेद में यह एक प्रभावात्मक रूप चित्र है । कवि की यह नायिका वैयक्तिक न रह कर सर्वजन सुलभ हो गयी है । ऐन्द्रिय चेतना की अपेक्षा यह रूप चेतना का ही अधिक उभरा हुआ चित्र है ।

रीतिकालीन काव्य में नायिका भेद के इतने

अधिक विस्तृत सूक्ष्म तथा मार्मिक चित्र खींचे गये हैं और उनमें सांस्कृतिक पक्षो का इतना विशद् अंकन है कि वह एक स्वतंत्र तथा गम्भीर विषय के रूप में डा0 छैलबिहारी गुप्त के डी0लिट् शोध प्रबन्ध का आधार बन चुका है । {1}

संक्षेप में कहा जा सकता है कवि कवियों ने नायिका भेद को लेकर सौन्दर्य चित्रण, इन्द्रियोन्जेक रूप वर्णन, संवेगात्मक रूप-स्फुरण, मनोवैज्ञानिक विघटन प्रभावात्मक रूप विश्लेषण,भावात्मक अतिक्रमण, आलंकारिक प्रस्तुतीकरण तथा विषय वस्तु के प्रति जिस आत्म सचेतनता के उदाहरण दिए हैं, वह किसी अन्य काल में नहीं प्राप्त होते । सच तो यह है कि नायिका भेद के आधार पर ही रीतिकाल की समस्त चित्रयोजना का ढांचा खड़ा हुआ है इसी के अन्तर्गत शिख-नख वर्णन, अंग-प्रत्यंक वर्णन, विविध प्रेम-क्रीड़ाएं तथा मिलन और विरह के विविध चित्र हैं ।

इस विषय में बिहारी के निम्नलिखित उदाहरण दृष्टव्य है-

{1} बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाय ।
सौहे करै, भौहन हंसे, दैन कहे, नटि जाय ।।

{2} नई लगनि कुल की सकुच, बिकल भई अकुलाह ।
दुहूँ और ऐंची फिरति, फिरकी लौं दिन जाह ।।

{3} पलनु पीक अंजनु अधर, धरे महावर भाल ।
आज मिले सु भली करी, भले बने हौ लाल ।।

{1} स्टडीज इन नायक-नायिका भेद, डा0 छैलबिहारी गुप्त "राकेश"

नायिका की विरह की दस दशाओं के उदाहरण निम्नलिखित है :-

§1§ अभिलाषा -

वाम बांह फरकत मिलें, जो हरि जीवन मूरि ।
तौ तोही सों भेटिहों, राखि दाहिनी दूरि ।।

§2§ चिन्ता -

रहिहं चंचल प्रान ए, कहि, कौन की अगोत।
ललन-चलन की चित्त भरो, कल न पलनु की ओट ।।

§3§ स्मृति -

स्याम सुरति करि राधिका, तकति तरनिजा-तीरू ।
असुअन करति तरौंस को, खिन खोरौंहों नीरू ।।

§4§ गुणकथन -

लाल तिहारे बिरह की, अगनि अनूप अपार ।
सरसै बरसै नीर हू, मिटै न झरहूँ झार ।।

§5§ उद्वेग -

और भाति भएडवए, चौसर चंदन चंद ।
पीत बिन अति पारत विपति, मारतु मारूत मंद।।

§6§ प्रलाप -

कहै जु बचन वियोगिनी, बिरह विकल बिललाय ।
किए न किहि अंसुआ सहित, सुआति बोल सुनाय ।।

{7} उन्माद -

मरिबे की साहसु ककै, बढ़े बिरह की पीर ।
दौरति है समुहैं ससी, सरसिज सुरभि समीर ।।

{8} व्याधि -

अरी पैर न करै हियो, लरै जरै पर जार ।
लागति घौरि गुलाब सों, मिलै मिलै घनसार ।।

{9} जड़ता -

मरो डरी कि टरी बिथा कहां खरी चलि चाहि।
रही कराहि-कराहि अति, अब मुख आहिन आहि ।।

{10} मरण -

होता नहीं है इसका कथन मात्र होता है ।

गनती गनिबे तै रहे, छत हूं अछत समान ।
बलि, अब ए तिथि औम लौ परे रहैंहै तन प्रान ।।

मुख्य रूप से वियोग के चार भेद माने गये है :-

{1} प्रवास

{2} मान

{3} पूर्वराग {रसाभास}

{4} करूण

सारांश रूप में नायिका-भेद की तालिका इस प्रकार प्रस्तुत की जा सकती है :

{1} आचार्य भरत

{क} व्यवहार परक -

{1} आभ्यान्तरा {वरवधू} {2} बाहना {कुलवधू}

{3} बाहनाभ्यान्तरा {जो वर-वधू न रह कर कुलवधू का अचारण करे}

{ख} वियोग संयोग परक -

{1} वासक सज्जा {2} विरहोत्कंठिता {3} स्वाधीन पतिका {4} कालहान्तरिता {5} खण्डिता {6} विप्रलब्धा {7} प्रोषित भर्तका {8} अभिसारिका

{ग} प्रेम परक -

{1} मदनातुरा {2} अनुरक्ता {3} अधना

{घ} प्रकृतिपरक -

{1} उत्तमा {2} मध्यमा {3} अधमा

{ङ} यौवन परक -

{1} प्रथम यौवना {2} द्वितीय यौवना {3} तृतीय यौवना {4} चतुर्थ यौवना

{च} गुण परक -
{1} दिव्या {2} नृपपत्नी {3} कुलस्त्री {4} गणिका ।

{2} आचार्य रुद्रट-

§आ§ प्रगल्भा - ज्येष्ठा, कनिष्ठा

§ग§ दशा परक - §अ§ ज्येष्ठा-धीरा,अधीरा,मध्या ।

§आ§ कनिष्ठा -धीरा, अधीरा, मध्या ।

§2§ प्रेमकोटि - §अ§ स्वाधीन पतिका

§आ§ ~~खण्डता~~ प्रोषित पतिका

§3§ भाव कोटि §अ§ अभिसारिका

§आ§ खण्डिता

§4§ परकीया - §अ§ आयु कोटि - §1§कन्या §2§ अनूढ़ा

§आ§ भाव कोटि - §1§अभिसारिका§2§खण्डिता

§3§ आचार्य भोजराज

§क§ कथा कोटि - §1§ नायिका §2§ प्रतिनायिका

§ख§ उपयन कोटि- §1§ ज्येष्ठा §2§ कनीयसी

§ग§ मान कोटि- §1§ उद्धता §2§ उदात्ता §3§ शान्ता

§4§ ललिता ~~§5§ उद्धता §6§~~

§घ§ सामान्या - §1§ ऊढ़ा §2§ अनूढ़ा §3§ स्वयम्बरा

§4§ स्वैरणी §5§ वैश्या ।

§ङ§ पुनर्भू - §1§ अक्षता, यातयाता

§2§ क्षता, यायावरा

§च§ आजीविका कोटि - §1§ गणिका §2§ रूपजीवा §3§ विलासिनी

आचार्य भानुमिश्र

{1} स्वीया - क- अवस्था परक - 1· मुग्धा 2·मध्या 3·प्रगल्भा

ख- आयुकोटि - 1· अज्ञात यौवना 2· ज्ञात यौवना

ग- विश्रब्ध कोटि - 1· नवोढ़ा 2· विश्रब्ध नवोढ़ा

{2} आयुकोटि {प्रगल्भा}- 1· रति प्रीतमती 2·आनंद समोहवती

{3} मान परक - 1· धीरा - ज्येष्ठा, कनिष्ठा
{मध्या} 2· अधीरा - ज्येष्ठा, कनिष्ठा
3· धीराधीरा-ज्येष्ठा, कनिष्ठा
{प्रगल्भा} 1· धीरा -ज्येष्ठा, कनिष्ठा
2· अधीरा-ज्येष्ठा, कनिष्ठा
3· धीराधीरा -ज्येष्ठा, कनिष्ठा

{4} परकीया

{क} अवस्था परक - 1·प्रौढ़ा कन्यका

{ख} भाव परक -1· गुप्ता 2· विदग्धा 3· लक्षिता
4· कुलटा 5· अनुशयना 6· मुदिता

{5} सामान्या -

कोई भेदापभेद नहीं है ।

आचार्य रूपस्वामी -

समस्त परम्परागत नायिका भेद की स्वीकृति तथा

साधना परक -

§1§ हरिप्रिया

§2§ वृन्दावनेश्वरी

§3§ यूथेश्वरी

§6§ आचार्य अकबर शाह

1. मध्या नायिका - प्रच्छन्न, प्रकाश
2. प्रगल्भा नायिका - परकीया, सामान्या
3. प्रौढ़ा नायिका - उद्बुद्धा §स्वयंदूती, लक्षिता, साहसिक§
   - उद्बोधिता §धीरा, अधीरा, धीराधीरा§

§4§ सामान्या नायिका -

1. स्वतंत्रा
2. अनन्याधीना
3. नियमिता
4. कल्पतानुरागा
5. कल्पितानुराग

§5§ अवस्थानुसार नायिका -

1. वासक सज्जा
2. बिरहोत्कंठिता
3. स्वाधीन पतिका
4. कालहान्तरिता
5. खण्डिता
6. विप्रलब्धा

7. प्रोषित भर्तृका
8. अभिसारिका
9. वक्रोक्ति गर्विता

§6§ कामपरक नायिका -

1. पद्मिनी
2. चित्रिणी
3. शंखिनी
4. हस्तिनी

रीतिकालीन कवियों ने नायिका भेद के वर्णन में जिस विशाल भित्ति की कल्पना कर उसके ऊपर भिन्न-भिन्न चित्रों का निर्माण किया । उन सभी की प्रेरणा संस्कृत के लक्षण ग्रन्थों से प्राप्त हुयी है ।

षष्ठ : अध्याय

नारी की मानसिकता का चित्रण

(क) प्रत्यक्ष रूप में

(ख) अप्रत्यक्ष रूप में

नारी की मानसिकता का चित्रण :- प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष

नारी की भूमिका -

हिन्दी रीतिकाल में नारी का स्वरूप निर्धारित करने के पहले नारी का व्यक्तित्व का मूल्यांकन करना नितांत अपेक्षित है । नारी भगवान की ही अद्भुत कृति नहीं है वरन् मानवों की भी अद्भुत सृष्टि है । मनुष्य अपने अन्तरम् से नारी को सौन्दर्य की विभूति सेो विभूषित करता है । कविगण स्वर्णिम कल्पना के धागों से उसके लिए जाल सा बुनते रहते हैं मानवहृदय की वासना ने सदैव नारी के यौवन को ऐश्वर्य प्रदान किया है । वैदिक काल में भारतीय समाज में नारी का सशक्त व्यक्तित्व सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है किन्तु उसकी दशा उत्तरोत्तर हीन होती चली गयी । वैदिक काल में आरम्भिक विकास की दृष्टि से स्त्रियाँ पुरूषों के समान ही अधिकार प्राप्त थे किन्तु धीरे-धीरे स्त्रियों की शारीरिक दुर्बलताएं ही उनके लिए अभिशाप बन गई पुरूषों ने उनके अधिकारों को अपहृत करना प्रारंभ कर दिया । सूत्रों, महाकाव्यो और स्मृतियों के युग में स्त्रियों का सम्मान सैद्धान्तिक रूप से तक ही रह गया था । स्पष्ट रूप में उनकी स्थिति अपेक्षाकृत गिरी हुयी है । बौद्ध काल में अनेक स्त्रियां निर्वाण खोज में भिक्षुणियाँ बनी पर सामाजिक क्षेत्र में उनकी स्थिति उत्तरोत्तर गिरती जा रही थी । मध्ययुग तक

पहुंचतेपहुंचते स्त्री बिल्कुल पंगु हो गयी थी । नारी की इस स्थिति के पीछे एक ओर देश की विषम स्थितियां थी, तो दूसरी ओर पुरूष का भी इस दिशा में कम हाथ नहीं था । स्वयं नारी ने भी अपनी स्थिति के प्रति कोई विरोध नहीं किया ।

समाज की परिस्थितियां देश के सोहित्य का सदैव ही प्रभावित करती रहती हैं नारी की निन्दात्मक और प्रशंसा-त्मक दोनों दशाओं का ही चित्रण हुआ । मध्यकालीन साहित्या मे नारी को लेकर कवियों ने अपनी वैराग्य जन्य कुण्ठाओं को ही अधिक प्रकट किया । रीतिकाल में नारी को विलासिता का केन्द्र बनाकर सम्पूर्ण काव्य रचना की गई । डा0 नगेन्द्र ने लिखा है -"रीतिकाल में पुरूष को नारी विशेष की व्यैक्तिक संज्ञा §इनाडिविजुअलिटी§ से प्रेम नहीं था । उसके नारीत्व से ही प्रेम था " §1§

डॉ0 उषा पाण्डेय की मान्यता है -"मध्य युगीन कवियों द्वारा चित्रित नारी के सत् एवं असत् दोनों रूप उपलब्ध हैं । आदर्श तथा कल्पना के प्रति मोह के कारण उसकी विशेषताओं में परिलक्षित कर कवि ने उसे सुन्दरी की संज्ञा दी कभी उसकी दुर्बलता एवं दोषों पर खीझकर उसके कुनारी कहा है सत् एवं असत् आदर्श एवं यथार्थ की इन्हीं रेखाओं पर मध्युयगीन कवि ने नारी का चित्रण किया है । " §2§

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में पुरूष अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्र होने के कारण उच्छृंखल और निष्ठुर बन जाता है ।

---

§1§ रीतिकाल की भूमिका -डा0 नगेन्द्र, पृष्ठ सं0-62

§2§ मध्युयुगीन हिन्दी साहित्य में नारी भावना
डॉ0 उषा पाण्डेय पृष्ठसं0 242

प्रेम की परिधि लांघ कर अमर्यादित व्यवहार कर सकता है इसकी प्रतिक्रिया नारी जीवन पर पड़ती है वह अधिक दुखी संत्रस्त हो जाती है पुरुष को सीमा में रखने के लिए आत्म-बलिदान का आश्रय ग्रहण करने के लिए बाध्य हो जाती है। परिणाम स्वरूप स्त्री के श्रृंगार की विविधता और प्रेम के क्षेत्र में अनेक भंगिमाओं के चित्र सहज ही उभर आते है इसके साथ ही दाम्पत्य सम्बन्ध में प्रेम की पूर्णता है इस प्रेम में आत्म समर्पण की प्रधानता है और यह आत्म समर्पण जितना अधिक स्त्री द्वारा होता है उतना पुरुष द्वारा नहीं यद्यपि इसके अपवाद भी देखे जा सकते है आत्मा और परमात्मा प्रतीक रूप में स्त्री और पुरुष है दोनों एक ही सत्ता के दो रूप है ।

रीतिकाल में नारी की मानसिकता का चित्रण :

रीतिकाल में सर्वप्रमुख प्रवृत्ति को लेकर आगे बढ़ी भौतिक जीवन की पूर्णता के लिए काम जीवन की सर्वप्रमुख प्रवृत्ति मानी जाती है । काम शब्द को अनेक अर्थों में प्रयोग हुआ अपने प्रचलित अर्थ में भिन्न लैंगिक सम्पर्क की इच्छा काम है । इस काम के कारण ही एक वस्तु दूसरी पर आकृष्ट होकर संयोग करती है इसीलिए काम को ही सृष्टि की अर्थात् दो वस्तुएं के मेल के नयी वस्तु की उत्पत्ति का कारण माना गया है । आदिकाल से ही नारी इसका मुख्य आकर्षण

बनी रही है भक्तिकाल में नारी अपनी मर्यादाओं के दायरे में ही पड़ी रही । उस काल में राधा-कृष्ण के चरित्र और दाम्पत्य जीवन के विविध प्रतीकों का सहारा लिया गया। कबीर जैसे बीहड़ प्रकृति के कवि भी भाव-विभोर होकर कहते हैं - "हरि मोरा पिउ, मैं हरि की बहुरिया"

कहने का तात्पर्य यही है नारी जो इस विश्व की जन्मदात्री है, जिससे सम्पूर्ण मानवीय जाति वलायमान है वही नारी रीतिकाल के काव्यों में आकर केवल शारीरिक सुख की साधन मात्र रह जाती है । रीतिकाल में कवि ईश्वर और मनुष्य दोनों का मनुष्य रूप में चित्रण करता है उनके चित्रण में राधा कृष्ण और सामान्य प्रेमी प्रेमिका एक दूसरे में घुल-मिल गये हैं जब जैसी मनःस्थिति हुयी वैसा ही अनुभूति निथर गयी । सौन्दर्य इस काव्य धारा का साध्य है, किन्तु सौन्दर्य के प्रति इन कवियों की दृष्टि प्रायः संकुचित है । क्योंकि इसके केन्द्र में नारी वर्तमान है नारी के अंग-प्रत्यंग का सौन्दर्य वर्णन कवियों ने खूब खुले ढंग से किया । शरीर के एक-एक अंग को लेकर उसका सौन्दर्य वर्णन करने की शास्त्रीय परिपाटी आचार्य केशवदास से प्राप्त होती है । मध्यकाल में संत कवियों ने निवृत्ति परक, एकान्त साधना अपनाकर नारी का बहिष्कार कर दिया था नारी को "नरक की खान" बताया था । रीति-युग की ह्रासोन्मुखी चेतना में वह शरीर-मात्र बनकर रह गयी ।

राज्याश्रित कवियों ने अपने आश्रयदाताओं की प्रसन्नता तथा अपनी उन्नति के लिए नारी के उपयोग मन बहलाने तथा भोग लालसा की तृप्ति के लिए अनेक साधनों के बीच नारी को खड़ा किया । नारी के शरीर और मन को केवल दैहिक स्तर पर इन कवियों ने मनमाने ढंग से उसका चित्रण किया । ऐसा लगता है कि नारी केवल शारीरिक उपभोग्य के लिए ही इस संसार में उत्पन्न हुयी है । उसके पास न अपना विवेक है और न अपनी मानसिकता । स्त्री को जिसने चाहा अपने ढंग से उसका इस्तेमाल किया । दु:ख और सुख में भी स्त्री का उपभोग एक वस्तु बनकर रह गया । आखिर क्यों ! रीतिकाव्य में नारी को इतना कामुक बना दिया था ? इसके लिए प्राय: उस समय की राजनैतिक और सामाजिक परिस्थितियाँ ही जिम्मेदार हैं ।

ज्ञातव्य है कि रीतिकाव्य में कलात्मक तत्वों के संयोजन में दरबारी वातावरण का महत्वपूर्ण योग रहा । राज दरबार में रहकर ये कवि आर्थिक चिन्ता से मुक्त होकर काव्य साधना किया करते थ । रीतिकाल राजकीय सत्ता के विकेन्द्रीकरण का काल था । परिणाम स्वरूप कवि अनेक छोटे राज्यों में आश्रय ग्रहण करने को बाध्य रहे ओरछा दरबार के केशवदास, बूँदी दरबार में मतिराम, पन्ना दरबार में भूषण, चरखारी दरबार

में प्रतापसिंह, जयपुर आमेर दरबार में बिहारी, नागपुर दरबार में चिन्तामणि, पिहानी दरबार में देव, प्रतापगढ़ दरबार में भिखारी दास दरबार में रघुनाथ, किशनगढ़ दरबार में बेनी तथा दिल्ली दरबार में गंग नरहरि आदि के रहने का प्रमाण मिलता है । इस प्रकार राजतंत्र के उदय से उसकी समाप्ति तथा इन राज्याश्रित कवि की अविच्छिन्न परम्परा देखी जा सकती है ।

राजा और कवि का सम्बन्ध पारस्परिक था । राजा कवि सुख-सुविधा सम्पन्न बनाता था । और कवि प्रशस्तिगान अथवा व्यक्तिगत अभिरूचि के अन्तर्ग उसकी अहम् भावना को तृप्ति करता, उसके यश और कीर्ति को अमरत्व प्रदान करता था काव्य रचना आत्माभिव्यक्ति न रहकर शासक वर्ग की इच्छा की अनुवर्तिनी बन गयी और काव्य प्रतिभा जीवन के यथार्थ चित्रण न होकर सौन्दर्य चित्रण बन कर रह गयी ।

डा0 नगेन्द्र के शब्दों में --"राजतंत्र तथा सामन्तवाद के प्रभाव ने कला तथा साहित्य को ऐश्वर्य तथा अलंकार के रूप में स्वीकार किया । ऐसी स्थिति में साहित्य सर्जना का क्षेत्र अभिव्यंजना चमत्कार और आश्रयदाता के रूचि प्रसादन तक ही सीमित हो गया ।" ऐसे सीमित दायरे के अन्तर्गत कवियों को

दृष्टि नारी के कोमल भावनाओं पर पड़ी वो अपनी लेखनी में नारी को प्रेरणा के रूप में न स्वीकार कर उसे अपनी काव्य प्रगति के रूप में स्वीकार कर रहे वो अपने शासकों के समक्ष नारी का ऐसा चित्रण किया करते थे कि उनको धन और यश दोनों की वृद्धि प्राप्त होती थी । सुख और समृद्धि के काल में राजदरबार की विलासिता का अनुवर्तन नगर का समृद्ध तथा विलासी वर्ग भी किया करते थे । ऐसे ही विलासी नागरिक की दैनिक चर्या का प्रथम निरूपण वात्स्यायन के कामसूत्र अथवा देव के अष्टयाम में उपलब्ध होता है । वात्स्यायन ने काम को स्वाभाविक तथा शाश्वत् प्रवृत्ति के रूप में देखा है वे इसे आहार के समान ही अनिवार्य मानते है अपने अस्तित्व को बनाये रखने की कामना ही है इसके लिए जितनी भी क्रियाये की जाती हैं, सभी काम के अन्तर्गत आती है क्योंकि सभी का उद्देश्य आत्मावास्थिति और आत्म सुख होता है ।

वात्स्यायन के अनुसार -

"श्रोत्रत्वक् चक्षुजिह्वा घ्राणानामात्म संयुक्तेन
मनमसाधिष्ठितानां स्वेषु विषयेष्वानुकूल्यत: प्रवृत्ति: काम:।" §1§

अर्थात् कान, त्वचा, आँख, जिह्वा और नासिकाये पांचो इन्द्रियां अपने अपने कार्यों में मन की प्रेरणा के अनुसार काम द्वारा प्रवृत्त होती है । जीवन की मूल-प्रवृत्ति होने के

---

§1§ वात्स्यायन - काम सूत्र 1,2

के कारण व स्वभावत: ही सबसे अधिक गंभीर वृत्ति भी है इसी गंभीरता में तन्मय होकर रीतिकाव्य में काव्य की सृजना की गयी चुंकि इसके आकर्षण का मुख्य केन्द्र नारी रही इसीलिए कविगण नारी के अंग-प्रत्यंग का वर्णन करके अपने शासकों के मन में उसके प्रति वासना की प्यास जगा कर स्त्री को मात्र भोग्या बना कर छोड़ दिया इसके बदले कविगण को मिलना था सम्मान, यश, कीर्ति । लेकिन स्त्री को आत्म सन्तुष्टि नहीं मिली । अपनी सुन्दरता का वर्णन सुनकर वो आत्म-विभोर हो जाती है । विविध श्रृंगारिक चेष्टाओं का प्रदर्शन रूप वर्णन को कुछ ऐसी प्रवृत्तियां वर्तमान थी जिससे विलासिता की भावना ~~सम्पूर्ण~~ सम्पूर्ण वातावरण में विद्यमान हो गयी । रीतिकाव्य में प्राय: सर्वत्र ऐसा ही मादक अंगूरी वातारण व्याप्त है ।

नारी की दैहिक आवश्यकताओं की पूर्ति के इस क्रम मे राजनीतिक पृष्ठभूमि भी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है । रीतिकाव्य की श्रृंगारिकता तत्कालीन विलासवृत्ति से प्रभावित है । नायिकाभेद निरूपण विविध श्रृंगारिक चेष्टाओं के प्रदर्शन रूप वर्णन की कृत्तिमता इत्यादि मे इसी की स्पष्ट छाया दीख पड़ती है ।

रीतिकालीन कवियों में राजसी या दरबारी प्रभाव सर्वत्र विद्यमान था । अत: वे अपने आश्रयदाताओं वे अपने राजा

को प्रसन्न करना नहीं उनका प्रभाव लक्ष्य था । काव्य का प्रयोजन इसी ध्येय की पूर्ति का साधन मात्र था । इसीलिए कामोत्तेजक स्थूल श्रृंगार के विलासिता पूर्ण चित्र उपस्थित करके राजाओं को प्रसन्न करना चाहते थे और साथ पुरस्कृत होना भी । वे अपने श्रृंगार परक काव्यों से अपने आ आश्रयदाताओं को श्रृंगार के चषक पर चषक पिलाते गये ।

नायक-नायिका सम्बन्धी ग्रन्थो की विपुलता इस का पुष्ट प्रमाण है नायिका भेद को वि तार देकर भी ये कवि विविधता या मौलिकता न दे सके । इन कवियों नायिकाओं की कतारे तो खड़ी कर दी पर उनकी मानसिकता का विवेक सम्मत विवरण वे प्रस्तुत या प्रकट नहीं कर पाये क्योंकि उनका दृष्टिकोण प्रधानतः नारी के मांसल और शारीरिक सौन्दर्य वर्णन के सीमित दायरे तक ही संकुचित था ।

"नारी केवल मांस पिण्ड की संज्ञा नहीं है आदिम काल से आज तक विकास पथ पर पुरुष को साथ देकर उसकी यात्रा को सरल बनाकर, उसके अभिशापों को स्वयं झेलकर और अपनी वेदनाएं स्वयं सहन कर, अपने वरदानो से जीवन में अक्षय शक्ति भरकर मानवो ने जिस व्यक्तित्व चेतना और हृदय का विकास किया उसी का पर्यायनारी है ।" लेकिन रीतिकाव्य

के कवियों ने नारी के इस रूप का तिरस्कार कर समाज में पुरस्कार पाने की महत्त्वाकांक्षा से नारी को केवल भोग्या के रूप में स्वीकार किया । पुरूष की कभी न बुझने वाली वासना-अग्नि में नारी का जो चित्रण किया गया उनके सतित्व की नग्न तस्वीरें चित्रित की गयी ।

नारी सौन्दर्य की भावभूमि विस्तृत है नारी सौन्दर्य का केन्द्र बिन्दु है नारी की अंग प्रत्यंग के चित्रण में कवि ने ऐसी सृष्टि की है जो नित नवीन गति में गतिमय होती गयी है । कवि की सौन्दर्य चेतना में दृष्टि इतनी रमी की यह प्रकृति सौन्दर्य की अपेक्षा नारी सौन्दर्य में अधिक झुका श्रृंगार रस की अभिव्यक्ति के लिए नारी के बाह्य और आन्तरिक सौन्दर्य का चित्रण किया गया है । श्रृंगार रस और नारी सौन्दर्य में अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है जो श्रृंगार को उद्दीप्त करने में स्त्री को आलम्बन बनाता है तथा उसके प्रत्येक अवयवों का सांगोपांग सौन्दर्य रसानुभूति को तीव्र करने में सहायक होता है । श्रृंगार के मूल में रति अथवा काम की भावना है । मनुष्य कामोद्वेग से काम प्रवृत्त है । अतः श्रृंगार की उत्कृष्टता अन्य रसों की

तुलना में कहीं अधिक है मनुष्य का विलासी मन या ऐन्द्रिय
मात्र ही साहित्य में नारी को लेकर कवियों ने अपनी वैराग्य
जन्य कुण्ठाओं को ही अधिक प्रकट किया । श्रृंगार जन्य उद्‌गारों
से मानसिक तुष्टि मिलती है । हृदय स्थित वृत्तियों के चित्रण
से विस्तार का जो रूप इस रस में मिलता है वह अन्य रसों
में मिलना दुर्लभ है । सौन्दर्य में आकर्षण है, सम्मोहन है और
यह आकर्षण और सम्मोहन नारी के पार्थिव शरीरमें सबसे अधिक
है क्योंकि वासना को उद्‌दीप्त करती है नारी और उसको
तृप्ति भी उसी के माध्यम से होती है ।

नारी के इस प्रवृत्ति के विषय में "केलिन पाल" का
कथन है -- "स्त्रियाँ किसी अश्लील कार्य करने में उतनी हिच-
किचाहट का अनुभव नहीं करती जितनी की उसे कहने में ।"{1}

इसलिए विश्व साहित्य इस श्रृंगार रस से ओते-प्रोत
है फ्रायड के अनुसार - सभी कृत्य और कार्य व्यापार जो मनुष्य
द्वारा किये जाते है । उसके मूल में वासना और काम का प्राधान्य

---

(1) Modest women have a much greater horrer of saying Im modest thing than of doing them.

—— Kelin Raj

हैवलाक एलिस -साइकालाजी ऑफ सेक्स --66

है काम की भूख जन्मजात है निसर्ग प्रवृत्त है । प्रगतिशील संस्कृति सभ्यता और साहित्य के आचरण व्यवहार में उसी की परिमार्जित अभिव्यक्ति है ।

कवि बिहारी ने रीतिकालीन नायिका के शरीर के सभी अवयवों के सौन्दर्य का वर्णन किया है ।

> अपने अंग के जानिकै, जोबन नृपति प्रवीन ।"
> स्तन, मन, नैन, नितम्बन कौ बड़ौ इजाफा कीन।।"

इस दोहे में नायिका के विकसित होते हुए स्तन नेत्र और नितम्बों का वर्णन किया गया गया है । इस दोहे के माध्यम से कवि यह कहना चाहते हैं । कि जिस प्रकार कोई राजा अपने हितैषियों को उच्च पद देता है उसी प्रकार यौवन रूपी राजा ने नायिका के स्तर नेत्र और नितम्बों में वृद्धि कर दी है, अर्थात् यौवन के आगमन के कारण उसके स्तर उठने लगे हैं नेत्र विशाल होने लगे हैं और नितम्बा में गुरुता आने लगी है ।

इसी तरह जब नायिका में नवीन यौवन का <u>आगमन</u> होता है तो उसके शरीर और स्वभाव में स्वतः ही कुछ परिवर्तन

आ जाते हैं जो उसके सौन्दर्य को और भी अधिक आकर्षक बना देते है शारीरिक शोभा के बढ़ जाने के कारण नायिका में काम वासना का भी संचार हो जाता हैं, जिसके कारण उसके शरीर में अनेक प्रकार के परिवर्तन आ जाते है ।

रीतिकालीन कवि देव ने रूप को परिभाषा देते हुए लिखा है :-

देखत ही जो मन हरे, सुख आँखियन को देई ।
रूप बखाने ताहि जो जग बैरो कर लेई ।। §1§

अर्थात् जो नेत्रों को सुख देता हुआ मन को सुख दे वही रूप है । "नेत्र उत्कृष्ट वस्तु को देख कर उस पर रीझ जाते है लेकिन आवश्यक नहीं कि जो वस्तु बाहर से सुन्दर है वह भीतर से सुन्दर हो इसलिए देव ने नेत्र और मन दोनों को ही सुन्दरता की श्रेणी में रखा है देव ने परम्परा के अनुसार नखशिख, शोभा-कान्ति, आदि अलंकार विलास ललित आदि हाव एवं अन्य सौन्दर्य तत्वों का विस्तृत वर्णन किया है । नखशिख आदि में जड़ सौन्दर्य का वर्णन वे नहीं करते वरन् तरंगीत चेतन सौन्दर्य ही उनका लक्ष्य है ।

---

§1§ रसविलास - देव

सौन्दर्यानुभूति की तीसरी स्थिति रह जाती है जो उपभोगमूलक होने के कारण वासनामयी होती है इतना सहचारी भाव रति होता है रीतिकाल के रूप वर्णन मूलत: इसी रूप से नायिका-नायक के माध्यम से कराया गया है उनके वर्णनों मे ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे कविगणो की सम्पूर्ण चेतना नारी के अंगो से लिपट-लिपट कर रस स्नात हो जाती है देव का एक उदाहरण इस संदर्भ में उल्लेखनीय है --

भोर ही भोर ही श्री वृषभानु के आयो, अकेलेई केलि भुलान्यो ।
देव जू सोवतही उत भामती झीनें महा अलके पट तान्यौं ।।
आरस ते उघरी एक बांह भरी छवि देखि, हहि आकुलान्यौं ।
मीड़त हाथ फिरै उमड़यौं सो मड़ो इक बीच फिरै मन्हरान्यौं ।।

यहाँ कवि कह रहा है कि नायिका झीना पट ओढ़े सो रही है आलस्य से एक बांह उघर गयी बस उसी बांह की छवि को देखकर नायक व्याकुल होकर उसके चारो ओर मीड़ता हुआ मंडराता फिर रहा है अलसानी बांह को भरी छवि द्वारा व्यंजित ऐन्द्रियता कितनी मादक है, उसमें वासना की कितनी भिनी मधुगंध है । रूप की उपभोग वासना कहीं-कहीं तो अत्यन्त

प्रगाढ़ हो गयी है इसका कारण सामाजिक और राजनीतिक पतन के ऐसे वातावरण से लिया जा सकता है जहाँ घोर निराशा सर्वत्र व्याप्त थी इस युग में जीवन बाह्य अभिव्यक्तियों से निराश घर की चहारदीवारी में ही अपनी अभिव्यक्ति कर सकता था । घर में उस समय न धर्माचरण था न शास्त्र चिन्तन अतएव अभिव्यक्ति का एक ही माध्यम था काम । बाह्य जीवन की असफलताओं से आहत मन नारी के अंगों में मुँह छिपाकर विमुग्ध विभोर हो जाता था । अत: रीतिकाल की शृंगार भावना में नारी के अंग प्रत्यंग का खुलकर चित्रण हुआ है । इस प्रकार इस काल में स्पष्ट रूप से शारीरिक रति काम को स्वीकृति है ।§1§

परन्तु ऐसा भी नहीं है कि रीतिकाल में सर्वत्र शृंगार, काम, वासना भी सर्वत्र हो, सेनापति, केशव आदि ऐसे कवि भी हुए हैं जिन्होंने प्राकृतिक उपादानों का भी सहारा लिया है । इनमें से एक थे कवि सेनापति जिन्होंने अपने कवित्त में श्लेष अलंकार का अद्भुत वर्णन किया । केशव दास को अपने पांडित्य का प्रभाव था और सेनापति की श्रेष्ठ रचनाओं में भक्त कवियों की परम्परा मिलती है ।

---

§1§ देव और उनकी कविता -84

रीतिकाल में कवि के भाव लोक में नारी का जितना अधिक चित्रण हुआ है । उतना संसार के किसी एक साहित्यिक युग की कविता में इतने बाहुल्य से हुआ है या नहीं संदिग्ध है किन्तु रीतिकालीन काव्य की नारी की एक बहुत बड़ी सीमा है और वह यह कि उसमें नारी के प्रमदा या रमणी रूप का चित्रण ही अधिक है रीतिकालीन कवि नारी के लिए जिन उपमानों का प्रयोग करता है वे उसकी मनोवृत्ति के साक्षी हैं सेनापति ने नारी को राजमहल, मेंहदी, मोहर, वाटिका तलवार, शमादान, अमरावती चौपड़ महाभारत की सेना, लंग काम की पाग कहा है अतः रीतिकाव्य के आधार पर नारी की प्रतिनिधि प्रतिमा निर्मित करने के अन्य रूपों की सर्वथा उपेक्षा की गयी है किन्तु यह अवश्य है कि नारी को रीतिकालीनकवि ने जिस दृष्टि से देखा है वह पूर्ण है समग्र तो है ही नहीं श्लाघ्य भी नहीं है ।

रीतिकालीन काव्य में नारी की अवतारणा अनेक रूपों में हुयी है किन्तु रीतिकवि का रसिक मन नारी के रमणी और प्रमदा रूपों पर स्वभावतः अधिक रमता था । गृहिणीऔर पत्नी आदि रूपों में भी रीतिकवि के लिए प्रमदात्व और रमणीत्व

का ही आकर्षण अधिक प्रबल था । केशवदास भामिनी को भोगों का परम आस्वाद मानते हैं स्त्री के बिना संसार छूट जाता है और संसार छूट जाने पर सुखों का योग समाप्त हो जाता है । -{1}

विज्ञान गीता में ही केशवदास ने एक अन्य स्थान पर कामके मुख से स्त्री को काम के शस्त्र के रूप में संबोधित कराते हैं उसको देखते ही धैर्य छूट जाता है । नियम और संयम टूट जाते है, संसार के सारे ज्ञान विज्ञान और समस्त विवेक शक्ति उससे पराजित हो जाती है समस्त संसार को जीतने के लिए काम ने अपने युवती रूपी शस्त्र का निर्माण किया है -- {2}

राजा जयसिंह के दरबार में पहुंचने पर उनकी स्थिति को देखकर बिहारी लाल को उद्‌बोधन में जो दोहा लिखकर भेजना पड़ा था । वह तत्कालीन उच्च वर्ग में व्याप्त काम परकता का प्रतीक है कवि स्वयं तो नारी के प्रति आकृष्ट

{1} जहाँ भामिनी भोग तंह भामिनी बिन कहं भोग ।
भामिनी छूटे जग छूटे सुख भोग ।।
केशवदास -विज्ञान गीता, पृष्ठसं0 154

{2} शील विलात सबै सुमिर अवलोकत छूटत धीरज भारी
हासादि केशवदास उदास सबै व्रत संयम नेम निहारी
भाखण ज्ञान विज्ञान विषै थिरी को बपुरा जो विवेक विचारो
या सिगरे जग जीतन को सुबलीमय अद्‌भुत शस्त्र हमारी
केशवदास ग्रन्थावली, पृष्ठ सं0 650

प्रतीक है कवि स्वयं तो नारी के प्रति आकृष्ट रहता ही था, "कामो स्वतां पश्यति" के अनुसार नारी की मनोवृत्ति में भी काम का गहरा रंग भर देता है सुखदेव मिश्र की नायिका किसी नन्द के कन्हैया से अपनी गाय दुहाने की जरूरत है । वह तो अत्यन्त अर्थगर्भ आमन्त्रण है नायिका को बुलाने के साथ वह सूनेपन और एकान्त का विज्ञापन करना भी नहीं भूलती । उसकी भाभी झगड़ा करके बाहर चली गयी है जिसके बिना उसे अपना घर बिल्कुल नहीं अच्छा लगता अर्थात् बहुत अच्छा लगता है पड़ोसिन अन्धी तो है पुकारने पर सुनती भी नहीं है, माँ मायके गयी है, भैया भी आज घर नहीं है किसी कन्हैया को आमंत्रण देने के लिए इससे उपयुक्त और कौन सा अवसर हो सकता है । --{1}

{1} न्यारी है रही है दिन द्वैक हो ते भाभी सीर,
तासु बिन न भावै मौन कहाँ कहा कीजिये ।
नेकहू न सुने बेर से बहू जो तेरियत,
आंधरी परोसिन यह दुख कैसे जीजिये ।।
x x x x
मैया गयी माइके सु भैया घर नाहिं आजु,
नन्द के कन्हैया मेरी गैया दुहि दीजिये ।।

सुखदेव मिश्र
पृष्ठसंख्या 159

बिहारी नारी के कामिनी रूप के बारे में लिखा है किसी परम सुन्दरी का क्षण-क्षण बदलता हुआ रूप चित्रकार के सामर्थ्य के बाहर हो गया है किन्तु बिहारी बिहारी का कलाकार इतना सक्षम है, उनकी दृष्टि इतनी पैनी है कि श्रृंगार और काम के क्षेत्र में मानसमन के प्रत्येक उत्थान-पतन को उनकी तूलिका एक ही हल्के से स्पर्श से मूर्त कर देती है जहाँ उनके समकालीन कवित्त और सवैया लिखने वाले कवियों को एक चित्र देने के लिए अनेक बार कहीं-कहीं अनावश्यक रूप से अपनी कूची का प्रयोग करना पड़ता था, इतने गहरे रंग भरने पड़ते थे कि सहृदय उन रंगों में ही खो जाये और तुकृत विषय उनके हाथ कम आये वहाँ बिहारी की एक रेखा भाव को मूर्त करने और बिम्ब को मुखर करने के लिए पर्याप्त होती है उनकी नायिका के नेत्र रूपी तुरंग लज्जा रूपी लगाम कोनहीं मानते । विचित्रता तो यह है कि घोड़े को लगाम खींचो ही नहीं जानी चाहिए वरना वह और तेज चलने लगता है यहाँ

भी नेत्र रूपी तुरंग को लज्जा रूपी लगाम को कड़ी करने पर और भी तीव्र गति से अपने मनतव्य अर्थात् प्रिय की ओर प्रस्तुत करते हैं । एक अन्य स्थान पर प्रियतम के ध्यान में मग्न नायिका दर्पण देखती है और अपने ही रूप पर रीझती और खीझती है ।

फायड ने काम को मानव स्वभाव की मूलप्रवृत्ति माना है भारतीय चिन्तन परम्परा के सन्दर्भ में यदि काम शब्द की व्याख्या प्रस्तुत की जाये तो अपने व्यापक अर्थ में कदाचित् फायड की मान्यता का समर्थन करेगा संभवत: इस लिए फ्रायड को बिना जाने की बिहारी फ्रायडीन परम्परा का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं उनकी नायिका प्रियतम के द्वारा चुम्बित शिशु मुख को इसलिए चूमती है कि उसके प्रियमुख के चुम्बन का सुख प्राप्त होता है ।

मतिराम में ऐन्द्रिय प्यास और तृप्ति का अभाव अपेक्षाकृत अधिक रसस्नात है प्रियतम के नेत्र मयंक मुखी की मृदुमुस्कान का पान करते रहते हैं किन्तु उनकी प्यास रंच मात्र नहीं बुझती । उनकी नायिका के मुस्काने पर सौन्दर्य राशि बिखर पड़ती है, ऐसा प्रतीत होता है । मानो पुष्पक

चम्पक लता में से चमेली के पुष्प झड़ने लगते हों । मतिराम के इस दृश्य में चक्षुरिन्द्रिय की प्रधानता है । बिम्ब का सम्बद्ध उसी से है किन्तु बिहारी में रसना की ललक है जब तक उनकी नायिका नहीं बोलती तभी तक पीयूष आदि में माधुर्य रहता है । उसके बोल इतने मीठे हैं, उसकी बातें इतनी सरस हैं कि उन्हें सुनने के बाद "अख-महूत-पियूख" की भूख नहीं रह जाती है । पावक शिखा की भाँति वह प्रियतम के हृदय से लिपट जाती है किन्तु वैचित्र्य यह है कि पावक शिखा से जलन के स्थान पर अन्तस् को आर्विर्भ शीतलता की अनुभूति होती है सेनापति की नायिका के तिरछे कटाक्षों की तेजस्विता प्रबल है ये उत्कृष्ट व्यक्ति की छाती में गड़कर ही रह जाते हैं ।

घनानंद की नायिका का गौरवपूर्ण और सुन्दर भाल ऐसा प्रतीत होता है मानों की वह आवास स्थल हो उसकी मीठी मृदुमुस्कान से रस स्रवित होता है ।

मतिराम की नायिका अपनी पड़ोसी के घर आग लेने गयी इस प्रक्रिया में आँखें मिलाकर मुख मोड़ते हुए हँसकर किंचित स्नेह व्यक्त कर आग लेने के साथ उसने पड़ोसी के हृदय में आग लगा दी और चली गयी ।

रीतिकाव्य के शृंगारी कवि आग लग जाने पर उसे बुझाना ठीक नहीं समझता। रमणी रूपी प्यास उसे बनी ही रहती है। रीतिकाल के रसिक कवियों में नारी के कामिनी रूप का चित्रण करने में अपनी अधिकांश काव्य शक्ति का नियोजन किया। स्त्री के सम्बन्ध में अतिशय प्रशस्ति और आकर्षण तथा अत्यधिक निन्दा और विकर्षण दोनों ही पुरुष मन की अस्वस्थ प्रवृत्तियां हैं।

स्त्रियों की सामान्य चरित्र हीनता के साथ गणिकाओं का भी उल्लेख मिलता है। परम्परानुसार गणिका का दर्शन मांगलिक और स्पर्श पापमय समझा जाता रहा है गणिका या वैश्यावृत्ति के माध्यम से जीविकोपार्जन, पूंजीवादी अर्थव्यवस्था और गणिका या वैश्या से मनोरंजन अभिजात्य संस्कृति के अभिशाप हैं। सम्पत्ति और शक्ति दोनों एक ही स्थान पर केन्द्रित थे धन और राजशक्ति की साझेदारी बहुत भयावह परिस्थिति उत्पन्न करती है।धनशक्ति और राजशक्ति ~~xxxxx~~ सम्पन्न को अपनी वैध-अवैध इच्छाओं और वासनाओं की तृप्ति के लिए शोषण करता है।

इस युग की इन्द्रिय जनित प्रेमभावना कर्मवाद की कठोरता से विलग करके समाज को पलायनवादी बनाती जा रही

थी । किन्तु यह पलायनवाद भी ऐहिक था । केवल शरीर जन्य क्षुधा की निवृत्ति में ही पूर्ण संतोषप्राप्त करने की बलवती इच्छा समाज में व्याप्त हो चली थी । ऐन्द्रिय प्रवृत्तियों के परिशोधन के उपरान्त ही उनसे लाभ उठाया जा सकता है । किन्तु रीतिकाल में, ये परिशोधन न हुआ और उसका नग्न रूप ही प्रस्तुत किया गया ।

डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा है समाज में एक प्रकार का "रुग्ण मनोभाव" विद्यमान था, इसी कारण परिशोधन का कार्य उस युग में पूर्णत: न हो सका और कला तथा साहित्य में ऐन्द्रिय प्रवृत्तियाँ बढ़ती चली गयी । चित्र कला तथा स्थापत्य में रंगविधान की विविधता हो गयी । तथा सजावट के उपकरणों की अतिशयता ने उसके स्वस्थ सौन्दर्य को निरूपित कर दिया है समाज की सौन्दर्य चेतना बहरंग कर हैदेवी चली गयी । इन कलाओं में जीवन की वास्तविक तथा स्वस्थ अनुभूतियों को आभाषित करने की शक्ति न रह गयी थी । साहित्य तथा काव्य भी उसी प्रवाह में बह रहा था जीवन के प्रति अत्यधिक ऐन्द्रिय तथा विलासपूर्ण दृष्टिकोण रखने के कारण समाज में अनैतिकता उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही

थी । मानवीय विकास के प्रयत्न शिथिल पड़ गये और भ्रष्टाचार तथा ऐन्द्रिय वासना ऐहिक जीवन के विकास सूत्र समझे जाने लगे । इस दृष्टि से रीतियुग का काव्य पलायनवादी काव्य है अकर्मण्यता तथा ऐन्द्रियता के योग से रीतिकाल में जिस साहित्य का सृजन हुआ वह निश्चित रूप से तत्कालीन समाज का प्रतिनिधित्व करने में असमर्थ रहा । वह एकांगी साहित्य है कि वर्ग विशेष का साहित्य, विशेष प्रवृत्तियों का साहित्य है अतः जन साहित्य की श्रेणी में वह कभी नहीं रखा जा सकता -

रीतिकाल में स्त्री का स्थान समाज में भोग्या मात्र था आर्थिक दृष्टि से कदापि स्वतंत्र नहीं था उसकी महत्ता एक शरीर से अधिक कुछ न थी नारी का यह व्यक्तित्वविहीन रूप सामाजिक चेतना से रहित था । नारी का कोई आदरणीय स्थान नहीं था ।

नारी के प्रति रीतिकालीन पुरुष का दृष्टिकोण:-

कौन गनै पुरवन नगर कामिनी एकै रीति ।
देखत हरै विवेक को चित्त हरै करि प्रीति ।।

रीतिकालीन धर्म जाति वर्ग के भेदभाव से परे नारी केवल कामोपभोग का साधन मात्र ही बनी हुयी है ।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि रीतिकाल में नारी का चित्र हमें रीतिसाहित्य में मिलता है उसमें नारी व्यक्ति नहीं टाइप के रूप में चित्रित हुयी है जहाँ-तहाँ उसका गार्हस्थ्य व्यक्तित्व नहीं उभरने पाया है ।{1}

नारी की पाशविक वृत्ति पर जितना शारीरिक संकेतों से युक्त बल दिया जाता है उतना रीतिकाल में नहीं दिया जाता है आज के कट्टरपंथी सिद्धान्तों के अनुसार अधिकांश भेद आदर्श तथा समाज को कठिन मान्यताओं के अनुकूल है प्रत्येक प्रकार की नारी सामाजिक नहीं तो इकाईगत सम्मान जुड़ा हुआ है । आज प्रकट एवं प्रच्छन्न दोनों प्रकार की वेश्यावृत्ति के होते हुए भी "गणिका" को सामाजिक सम्मान नहीं दिया जाता । परन्तु श्रृंगार कालीन काव्य में गणिका नायिका का भी अपना सामाजिक एवं साहित्यिक स्थान तथा सम्मान है, और उसका कारण है तत्कालीन समाज में गणिका का स्थान गणिका के लिए वारस्त्री, गणिका रूप जीवा साधारणी सामान्या आदि पर्याय शब्दों का प्रयोग होता है यही कारण है कि तत्कालीन कवि ने तत्कालीन सामाजिक मान्यताओं को मानकर गणिका को अपने साहित्य में स्थान दिया है आधुनिक साहित्य में गणिका का उद्धार करके उसे आधुनिका एवं "सोसाइटी गर्ल" के रूप में

{1} हिन्दी साहित्य - डॉ॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी
पृष्ठ संख्या- 398

अपने साहित्य में स्थान दिया है आज के समाज में वही गणिका का रूप और नाम है विशेष कर हाईसोसायटी या उच्च धनिक वर्ग के लिए जो महानगरों में रहता है क कारण यह है कि प्रभुसत्ता सम्पन्न व्यक्ति की नैतिकता ही उस काल की नैतिकता मानी जाती है, इस लिए आज जो राज्य कर रहे है उनके लिए ही नैतिक मूल समाज मे प्रचलित हो रहे है रीतिकाल में भी यही हुआ ।

इस सम्बन्ध में कार्लमार्क्स ने कहा है -

"द आइडियाज ऑफ द रूलिंग क्लास आर इन ऐवरी ईपक द रूलिंग आइडियाज ।" {1}

रीतिकाल में नारी के पद का अवमूलन नहीं हुआ था और चूंकि तत्कालीन कवियों ने समाज में प्रचलित नारी भावना का ही वर्णन किया है । उनके साहित्य में भी नारी विषयक भावना का "सैद्धान्तिक बौद्धिक या प्रायोगिक" ह्रास नहीं हुआ है । वैसे आज देशी-विदेशी चिन्तकों में दम्पत्ति गत सम्बन्धों पारिवारिक स्थान तथा सामाजिक महत्व की दृष्टि से नारी को पुनः मध्ययुगीन भाव तथा स्वाभाव से युक्त नारी पर बल दिया जा रहा है, क्योंकि उन्हें लगता है कि "आधुनिक नारी" की हत्यारी रूप आज उत्थान होता

{1} कार्ल मार्क्स - ऑन फ्रेडरिक ऐंगिल्सेज जर्मन आइडियोलोजी - पेज नम्बर - 39

जा रहा है -

नारी अति बल के भये, कुल कर होत बिनास ।

कौरव पांडव बरंन को, कियो द्रोपी नास ।।

कियो द्रोपदी नास, केकैयी दशरथ मारे ।

रामचन्द्र से पुत्र तऊ बनवास सिधारे ।।

कहै गिरिधर कविराय, बात महतरत न टारी ।

जो कुल सत्यानाश चहैं है, अतिबल नारी ।।

सप्तम : अध्याय

सुरुचिपूर्ण चित्र -
==========

(मांसल और अवांछनीय छवियां)

रीतिकालीन कविता का क्षेत्र बहुत व्यापक है कवियों के विषय सीमित हैं उनका काव्य भक्ति कालीन कृष्ण काव्य की अपेक्षा लघुत्तर हो गया है । किन्तु कवियों ने अन्योक्ति विधि से अपने कथ्य को गहनता और विस्तार दिया है । भक्तिकालीन रचनाकारों ने कृष्ण काव्य के अन्तर्ग नायक-नायिका के उन्मुक्त परिवेश में विचरण करते दिखाया है उद्दीपन के रूप में उन्होंने चांदनी रात, अमावस की रात, नदी का किनारा विस्तृत प्राकृतिक आदि सम्मिलित हैं सभी को अपनी कथ्य में समेटा है किन्तु रीतिकालीन रचनाकार इस मुक्त वातावरण से कट कर गलियों कमरों और बंद वातावरण के भीतर सिमट आया है नायक और नायिका का मिलन जो भक्ति काल में खुले परिवेश में घटित होता था । वह नगर व ग्राम की सीमित सीमाओं में परिबद्ध होकर रह गया है ।

रीतिकाल को शृंगार काल के अतिरिक्त कलाकाल भी कहा गया है । रीतियुग में विविध ललित कलाओं में होड़ चल रही थी । वास्तुकला, चित्रकला, संगीतकला और काव्य के सभी रचनाकार अपने आपको अग्रसर करने में तल्लीन थे बिहारी के एक दोहे को उद्धृत कर इस कलात्मक प्रतियोगिता का प्रमाण प्रस्तुत करना चाहूँगी एक बार महाराज जयसिंह के दरबार में एक चित्रकार अपना चित्र लेकर उपस्थित हुआ । सुबाहुता उसने अपना चित्र राजा को भेंट किया इसका चित्र कुछ विचित्र था जयपुर नरेश स्वयं संवेदनशील थे उन्होंने चित्र को उपस्थित दरबारियों के सम्मुख उन्मुख करते हुए कहा --

"कहलाने एकत बसत अहि मयूर, मृग बाघ"

और उसके बाद दरबारियों को उनके प्रश्न का उत्तर देना था प्रकट ही चित्र में परम्परागत शत्रुओं को एक साथ अभिचित्रित दिखाया गया था । किसी को भी कोई उत्तर नहीं सूझ रहा था तब प्रत्युत्पन्न मति बिहारी ने समस्या का हल प्रस्तुत किया -

"जगत तपोबन सौं कियौं दोरघ-दाघ निदाघ"

बिहारी के उत्तर से जयपुर नरेश ने प्रसन्न होकर चित्रकार के साथ बिहारी को भी पुरस्कृत किया। बिहारी का अन्य उद्धरण और देना चाहूँगी, उस समय चित्रकारों के परीक्षण के लिए संभवत: प्रतियोगितायें भी कराई जाती रही होंगी ।

इसका उदाहरण नीचे अवतरित है -

लिखन बैठो जाकी सबी गहि-गहि गरब गरूर ।
भये न केते जगत के चतुर चितेरे कूर ।। -- (1)

चित्रकारों के सम्मुख एक वयःसन्धि से जुड़ी बालिका को बिठा दिया गया था । और चित्रकारों के समक्ष उनका चित्र रखने की चुनौती थी ।

समय गतिमान और परिवर्तनशील है मनुष्य कम से कम सामान्य मनुष्य इस परिवर्तनशील को अनुभूति नहीं कर पाता है, मनुष्य वही होता है, किन्तु उसमें प्रतिपल विपल बदलाव होता रहता है आम आदमी इस क्षणबोध से अवगत नहीं है मनुष्य शिशु के रूप में जन्म लेता है और समय उसे कालान्तर में वृद्ध बना देता है अंग्रेजी मुहावरा इस अभिव्यक्त को सार्थक

---

(1) बिहारी सतसई
दोहा संख्या 68

करता है --

"Child is one month old. Ram is Sixteen years old. Sila is Twenty years old."

ये मुहावरे दानो बताती है कि अंग्रेजी का मुहावरा कितना सार्थक है शिशु एक महीना बूढ़ा है, राम सोलह वर्ष बूढ़ा है सोमा बीस वर्ष बूढ़ी है । कहने के समय का बोध नितांत स्पष्ट है ।

चित्रकार उस कौमार्यावस्था की बालिका का चित्र बनाना चाहते थे । लेकिन जितने देर में वे अपनी कूचो में रंग भरकर उसका चित्र बनाकर दुबारा उसको ओर देखते थे । उसके रूप में परिवर्तन लक्षित होता था और चित्रकार उस बालिका को छवि अंकित करने में असमर्थ रहे ।

बिहारी के एक अनेक दोहे बहुत शालीन सभ्य और सुसंस्कृत है उनके कलापक्ष का उभार और निखार देखते ही बनता था । अपर प्रस्तुत दोहा कलात्मकता के अतिरिक्त दार्शनिक गहन सूक्ष्मता से भी सम्पन्न है ये भावक सुगमता से समझ सकता है बिहारी के अतिरिक्त रीतिकाल के अन्य सभी रचनाकारों ने कला की यह बारीकी देखी जा सकतो है क्या प्रभाव होता है । ये उनके अष्ट याम निरूपण में उजागर है इसी प्रकार प्रत्येक दिन का प्रत्येक तिथि का प्रत्येक ऋतु का क्या प्रभाव होता है ये उनके अष्टयाम निरूपण में

उजागर है । इसी प्रकार प्रत्येक दिन का प्रत्येक तिथि का प्रत्येक ऋतु का क्या प्रभाव होता है, इसे कवियों ने मनोवैज्ञानिक कौशल के साथ जांच परख कर अपने अभि-व्यक्तियों में उजागर किया है ।

दैहिक अवयवों का ही वर्णन कर इनका अन्वीक्षन विधि आणुविक सूक्ष्मता से निरूपण किया गया है बालों से ले कर पैरों के नखों तक प्रत्येक अंग का "इलेक्ट्रान" और "प्रोट्रान" की भांति विश्लेषण इन कवियों की रचनात्मक में निरूपित है अलग, शतक, तिलहजारा जैसी रचनाएं विवेक सम्पन्न कवियों की अतिशय बौद्धिकता का निर्विवाद प्रमाण कही जा सकती है ।

आचार्य कवि केशवदास तो मुक्त रूप से कविता वनिता और मित्र के अलंकरण के पक्षधर थे । वस्तुत: उनको यदि रीतिकाल का नींव रखने वाला कवि मान लें तो कविता में श्रृंगार प्रसाधनों के प्रयोग की पृष्ठभूमि स्पष्ट ही देखी जा सकती है । श्रृंगार रीतिकालीन कवियों का एक प्रमुख कथ्य अवश्य है । उसमें वासनात्मकता, मांसलता, अश्लीलता यदि मिलती है, तो इस प्रकार की वस्तुएं श्रृंगार के अनिवार्य उपकरण के रूप में माने जा सकते हैं ।

रीतिकालीन कवियों ने नारी के रूप में सौन्दर्य की समग्रता देखी । नारी के किसी अंग में सुन्दरता नहीं बल्कि सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही सौन्दर्य से परिपूर्ण है । इस संदर्भ में घनानंद जी का उदाहरण प्रस्तुत करना चाहूँगी --

अंग अंग तरंग उठै दुति की ।
परिहै मनो रूप अबै घट च्वै ।। -- {2}

इसका आशय है कि नारी के प्रत्येक अंग में द्युति की ऐसी तरंग उठ रही है मानो रूप अब चू पड़ेगा ।

महाकवि देव ने नारी सौन्दर्य के बारे में प्रस्तुत उदाहरण में कि नायिका को स्नान कराने के लिए आयी हुयी सरल हृदया नाइन उसका निरावृत सौन्दर्य देखकर ठगी सी रह जाती है ।

आई हुती न्हवाबन नाइनि सोंधे लिए हुए वह सूंधे सुभाइन,
कंचुकी छोरि इतै उबटैबे को, ईंगुर से अंग की सुख दाइनि,
"देव सरूप की रासि निहारत पायते सीस लौं सीस लै पाइनि,
है रही ठौरि ही ठाढ़ी ठगी सी, हसै ठोढ़ी दिए ठकुराइनि।

इस युग की नारी अक्षय सौन्दर्य-निधि की स्वामिनी है, सौन्दर्य वर्णन का दूसरा उदाहरण देव का प्रस्तुत करना चाहूँगी --

---

{1} घनानंद ग्रन्थावली, प्रकीर्णक -2

{2} शब्द रसायन - पृष्ठ संख्या -99

जगमगे जोवन, जराऊ तकिखन कान, ओठन अनूठे रस हाँसी ठूमडे परत ।

कंचुकी में कसे आवै उकरने उरोज बिन्दु, बंदन लिलार, बड़े बार घुमड़े परत ।।

गोरे मुख, सेत सारी कंचन किनारीदार "देव"मनि झुमका झमकि झुमड़े परत ।

बड़े-बड़े नैन कजरारे, बड़े मोती नथ, बड़ी बरुनीन, होड़ा होड़ी हूमड़े परत ।।

श्रृंगार रीतिकालीन कवियों का मुख्य कथ्य है । इन कवियों ने नारी के सौन्दर्य का नयनाभिराम और मार्मिक चित्र उपस्थित किया है । कवि मतिराम का उदाहरण द्रष्टव्य है --

कुंदन को रंग फीको लगै, झलकै अति अंगन-चारु गोराई।
आंखिन में अलसानि चितौन में मंजु दिलासन को सरसाई।
को बिन मोल बिकात नहीं, मतिराम लहै मुसकानि मिठाः
ज्यों-ज्यों निहारिये नेरे है, नैनन त्यों त्यों खरी निकरैसी निकाई ।{2}

{1} हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास
डा0 नागेन्द्र
पृष्ठ संख्या 146

{2} मतिराम -रसराज

कवि मतिराम ने पाणिग्रहण संस्कार के अवसर पर होने वाली अनुभूति का बहुत ही सुन्दर चित्र उपस्थित किया है पाणिग्रहण संस्कार के समय जब नायिका ने नायक के हाथ का जैसे ही स्पर्श किया त्यों ही उसे पसीना हो आया और शरीर रोमांचित हो उठा स्पर्श की इस अनुभूति से उसके मन में मिलन की उत्कट इच्छा प्रकट हुयी वह पसीने के माध्यम से व्यक्त हो गयी । चोर मिहीचिनी खेलते समय कम्पन, स्वेद रोमांच और अश्रु जैसे सात्विक अनुभवों को एक साथ देखा जा सकता है ।

> एकहि मौन दुरे एक संग ही अंग छुवायौ कन्हाई ।
> कंप छुट्यौ धन स्वेद बढ्यौ तनु रोम उठ्यौ अँखिया भरि आई।।

रीतिकालीन काव्य मानवीय सौन्दर्य का काव्य है । इस युग के कवियों ने श्रृंगार रस, उसके आलम्बन और आश्रय {नायक-नायिका} के चित्रण पर कवियों की दृष्टि अधिक थी ।

नायक-नायिका में नायक की स्थिति अधिक महत्त्वपूर्ण मानी गयी । सौन्दर्य वर्णन के प्रसंग में प्राय: रूप रंग उज्ज्वलता दीप्ति गन्ध सुकुमारता का चित्रण नायिका का ही किया है रीति-कालीन कवियों ने नारी के सम्पूर्ण शारीरिक सौन्दर्य के लिये अगांग की विशेषताओं का चित्रित कर उसके रूप सौन्दर्य को अभिव्यक्ति प्रदान किया है ।

> बेसरि बहे बिराजति नासिका नैनन नीरज जाति के लोनो।
> गोरे-गरे गुरिया अंगिया अरू सेत दुकूल लसै तनु झीनो ।
> कवि मण्डन मंजुल बोलनि डोलनि, लोलनि चाहनि में
> चित चीनो ।
> रूप को मंदिर देहि मंदिर या बिध में बिधु को बधु
> कीनो ।। -{1}

कवि मण्डन ने नारी को रूप का मन्दिर कहा है उसकी सुन्दरता का वध कर दिया है ।

{1} प्रकीर्णन {मण्डन ग्रन्थावली}
छन्द 9

कवि पद्माकर ने रूप रस स्पर्श गंध सभी का मानसिक प्रत्यक्षीकरण किया है । उदाहरण द्रष्टव्य है --

कूलन में केलि में कछारन में कुंजन में,
क्यारिन में कलिन कलीन किलकंत है ।
कहै "पद्माकर" पराग हू में पौन हू में,
पानन में, पिकन पलासन पगंत है ।
द्वार में दिसान में दुनी में देस देसन में,
- बीथिन में ब्रज में नवेलिन में बेलिन है ।
बनन में बागन में बगरयौ बसन्त है ।।

रीतिकालीन कवियों का विलासिता प्रधान वातावरण को कृति होने के कारण सौन्दर्य चित्रण ऐन्द्रिय तथा स्थूल है सौन्दर्य की पिपासा इतनी तीव्र है कि रूप में उसकी तृप्ति नहीं हो पाती । वस्तु का सौन्दर्य उसके लिये कभी पुरातन नहीं होता जितना भी अधिक वह इसका साक्षात्कार करता है । इसके सान्निध्य में आता है उतनी ही उसे नवीनता उसके रूप मे दिखलाई पड़ती है वह सौन्दर्य का ही उदासीन द्रष्टा नहीं रहता उसका भोग्या भी बन जाता है।

इसलिए इन कवियों की रचनाओं में सौन्दर्य से अभिभूत स्थिति के दर्शन प्राय: होते रहते है रूप के इस प्रभाव को चर्चा प्राय: सभी कवियों ने की है कवि आलम ने नारी की आँखों में समुद्र से निकले चौदह रत्नों की कल्पना की है ।

उदाहरण -

> संत संख विष जोति अंजन जहर सांखि,
> चक्र धनु अरून सुमीन संग लाये है ।
> प्रेम सुरा सुधे धेनु सुन्दर समान रम्भा,
> आलम चपल हम काम के सधाये है ।
> प्रीति मधु पूतरो लच्छो पूरन,
> धनंतरि सुदृष्टि गजगति पसताये है ।
> काहे को समुद्र मंथि देवतान श्रमकीनो,
> चौदह रतन प्रिय नैननि में पाये है ।। -{1}

{1} रीतिकालीन संग्रह - आलम
छन्द संख्या -12

रीतिकवियों ने नारी के प्रत्येक स्थितियों और व्यापारों के सौन्दर्य का सूक्ष्म निरीक्षण किया है रीतिकाल के अत्यल्प कवियों ने ग्रामीण सौन्दर्य की ओर भी अपनी दृष्टि दौड़ाई है । इस दिशा में बिहारी विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं उनकी ग्रामीण नायिका पहुआ का हार पहने हुए भाल पर सन की बेंदी लगाये हुए खरे उरोजो वाली, खेतनी रखवायी कर रही है वह गोरो और मासल्य है उसने सुन किरवा का टीका लगा रखा है और हंसने से उसके गालो मे गड्ढे पड़ जाते हैं । मतिराम ने भी गूजरी के सौन्दर्य का ऐसा ही चित्र उपस्थित किया है -

"लसत गूजरी उजरी पिलसत लाल इजार ।
हिय हजारनि के हरै बैठो बाल बजार ।। ---- {1}

{1} रसराज - मतिराम
दोहा संख्या - 96

रीति कवियों ने कामवृत्ति को उभारने के लिए काव्य को मादक ऐन्द्रिय स्पर्श सर्वत्र व्याप्त है इस चित्र को उपस्थितकरने के लिए महाकवि देव का उदाहरण प्रस्तुत करना चाहूँगी कि नायिका स्नान कर जल से बाहर निकलने का सौन्दर्य दृष्टव्य है --

पीत रंग सारी गोर अंग मिलि गई देव ।

श्री फल उरोज आभा आभा है अधिक सी ।।

छूटि अलकनि छलकनि जल बूंदन की ।

बिना बेनी बंदन शोभा विकसी ।

तजि-तजि कुंज पुंज ऊपर मधुप गुंज गुंजरत,

मंजु रत बोले बाल पिकसी ।

नीची उकसाई नेक नयन हँसाय हँसि ।

ससि मुखी सकुचि सरोवर ते निकसी --- {1}

{1} रीति श्रृंगार - देव

पृष्ठ संख्या - 101

घनानंद जी ने भी नायिका के रूप वर्णन में नेत्र मुख भाल मुस्कान दन्त वाणी और गति की मुद्रा का उल्लेख किया है --

बाजनि लपेटि चितवनि भेदभाय भरी
लसति ललित लोल चख तिरछानि मैं
छवि को सदन गोरो भाल बदन रुचिर,
रस निचुरत मीठो मृदु मुसक्यानी मैं ।
दसन-दमक फैलि हमें मोती माल होति,
पिय सों लड़कि प्रेम परी बतरानि मैं ।
आनंद की निधि जगमगाति छबीली बाल,
अंगनि अनंग रंग ढुरि मुरि जानि मैं ।। -- §1§

रूप चित्रण के अन्तर्गत आकृतिमूलक सौन्दर्य अपनी चरम सीमा पर पहुंचा हुआ है नेत्र नासिका कपोल अधर दशन उरोज कटि चरण इत्यादि सौन्दर्य का निरूपण इनके लिए मानदण्ड के

---

§1§ घनानंद कवित्त
छन्द संख्या -1

मानदण्ड के आधार पर हुआ है शरीर के अंगो में नेत्र और उरोज कवियों के विशेष आकर्षण के केन्द्र है नारी के प्रति आकर्षण के केन्द्र बिन्दु प्रमुख रूप से ये ही दो तत्व हैं। इन तत्वों का सौन्दर्य निरूपण प्रायः निर्धारित अप्रस्तुतो द्वारा हुआ है। इस सन्दर्भ में "बेनी प्रवीण" का उदाहरण प्रस्तुत करना चाहूँगी --

चंपक सो तनु नैन सरोज से, इन्दु सो आनन जोति सवाई
बिम्ब से ओठ लसै तिलफूल सी, नासिका स्वास सुवास सुहाई ।।
बाहें मृणाल सी बेनी प्रवीन उरोज उतंग नयी छवि छाई ।।
ज्यों-ज्यों विलोकिये जु प्रति अंगन त्यों-त्यों लगै अत सुन्दरताई ।।

रीतिकाव्य की शास्त्रीयता श्रृंगार को एक व्यापक आधार देने में समर्थ हुयी है। कवियों को विराट से सजाने में समर्थ हुयी है इनके चित्रण में जो सूक्ष्मता आयी है जितनी रंगीनी मादकता और मधुरता है उसके उदाहरण हिन्दी साहित्य में विरल है।

श्रृंगारिक चेष्टाओं से उत्पन्न प्रतिक्रियाओं की अभि-व्यक्ति शारीरिक चेष्टाओं अथवा मनःस्थितियों के निरूपण द्वारा होती है । परस्पर आकर्षण की अभिव्यक्ति कटाक्ष निक्षेप सरस वचन प्रसन्नता कोमलता की मुस्कान धैर्य भ्रूक्षेप इत्यादि के द्वारा होती है ।

रीतिकालीन कवियों ने विलासिता पूर्ण वातावरण के प्रभाव से अवांछनीय काव्यों की रचना की इस युग में कवियों ने नायक-नायिका की समागम जन्य क्रीड़ाओं के अन्तर्गत स्पर्श आलिंगन चुम्बन दन्त एवं नखचित्र तथा इनकी चरम परिणति का वर्णन किया है इनके काव्य में अश्लीलता के दृश्य परिलक्षित होते हैं ।

रीतिकालीन कवियों ने विपरीत रति के उदाहरण भी प्रस्तुत करने में कोई कसर नहीं छोड़ी मतिराम कृत "रसराज" में विपरीत रति का उदाहरण द्रष्टव्य है ।

प्रान-प्रिया प्रिय आनंद सौं विपरीत रति रंग रह्यौ रुचै ।
काम कलोलनि मैं "मतिराम" रही छूटि त्यौं कटि किंकनी को है,।।
आनन को उच्चारो परी श्रम बूंद सोहत उरोज लहो दै ।
चंद की चाँदनी की परसैं मनो चन्द परवान छूटत चले च्वै ।।

रीतिकालीन कवियों के संयोग वर्णन में रति भाव पूर्ण उद्दामता में वर्तमान है इसके प्रति किसी प्रकार की ग्रन्थि उनके मन में वर्तमान नहीं है कामवृत्ति के सहज अतिरेक को केवल तत्कालीन रुग्ण मानसिकता की अभिव्यक्ति की संज्ञा देना उचित नहीं होगा ।

इस सन्दर्भ में कवि "दूलह" का उदाहरण द्रष्टव्य है --

धरो जब बाहो, तब करो तुम नाहीं
पाई दियो पालिकाही, नाँही नाही के सुहाई है,
बोलत मैं नाही पट खोलत मैं नाहीं
कवि "दूलह" उछाही, लाख भाँतिन लहाई है ।
चुम्बन मैं नाही परिरंभन मैं नाही
~~सब/भावभाव/केलि/कौतुक/ठकुराही~~
[illegible] विलासन मैं नाही ठीकठान है ।

मैलि गलबाही केलि कीन्ही चितचाही

यह हा ते भली नाहीं, सो कहाँ ते सीख आई हो ।।

अतः शृंगार रीतिकालीन कवियों का प्रमुख कथ्य अवश्य है इसमें वासनात्मकता मांसलता अश्लीलता यदि मिलती है तो इस प्रकार की वस्तुएं शृंगार के अनिवार्य उपकरण के रूप में माने जा सकते हैं ।

अष्टम : अध्याय

शृंगार काव्य क्या अध्ययन अनुशीलन
करना चाहिए ? क्या अवांछनीय काव्य
बहिष्कृत होना चाहिए ।

कला दृष्टि/सामाजिक दृष्टि

जैसा ज्ञात है रीतिकाल का समय 1650 ई0 से लेकर 1850 ई0 के बीच माना जाता है कभी-कभी इसे रीतियुग के प्रमुख पुर्वतक के रूप में आचार्य केशवदास को शामिल किया जाता है । इस सन्दर्भ में उनकी "कविप्रिया" और "रसिक प्रिया" का नाम आदर के साथ स्मरण किया जाता है । केशवदास सम्राट अकबर के समय में विद्यमान थे । अकबर का नाम इतिहास में बड़े आदर के साथ लिया जाता है किन्तु व्यक्तिगत रूप में वह भारतीय दृष्टि से चरित्रवान नहीं कहा गया है । वह इतिहासकारों के अनुसार सुन्दरतम् नारियों का वह चयन करता है । और प्राय: सभी को वह अपने हरम में रखवा लेता था । ओरछा नरेश से सम्बद्ध प्रवीणराय की सुन्दरता की जब उसने चर्चा सुनी तो उसे भी उसने बुला भेजा । केशवदास ओरछा नरेश के निर्देश पर प्रवीण राय के साथ गये । प्रवीणराय ने बड़ी चतुराई के साथ अकबर से बातचीत की और परोक्ष रूप से उसे अपमानित करते हुए बताया कि झूठी पत्तल कौवे, कुत्ते और इस प्रकार के अन्य जीव-जन्तु उपभोग करते है । फलस्वरूप अकबर को ग्लानि की अनुभूति हुयी । और उसने प्रवीणराय को ससम्मान ओरछा लौटने दिया ।

यह उदाहरण इसलिए प्रस्तुत किया गया है कि मुगलों के शासनकाल में नारियाँ दूसरी कोटि की नागरिक समझी जाती

थी । उनके अधिकार प्राय: समाप्त कर दिए गए थे । और उनको पुरुष की क्रीड़ा सामग्री के रूप में प्रयोग किया जाने लगा था ।

शाहजहाँ का शासनकाल 1650 में समाप्त होने पर भी औरंगजेब ने दिल्ली का मुगल/वंश शासन संभाला । 707ई0 में औरंगजेब के दिवंगत होने पर मुगल वंश के जितने भी उत्तराधिकारी हुए वे सब चारित्रिक स्तर पर दुर्बल थे दिल्ली का जमा-जमाया सुव्यवस्थित शान्तिपूर्ण ऐश्वर्य सम्पन्न शासन प्राप्त करने वाले सभी मुगल सम्राट आकंठ विलासिता में डूबे रहते थे । औरंगजेब के बाद मुगल शासकों में मोहम्मद शाह और बहादुर शाह "जफर" तक सभी कमजोर शासक सिद्ध हुए । नादिरशाह के आक्रमण के समय जहाँदार शाह की जो दुर्गति हुयी वह इतिहास प्रसिद्ध है । उसने शासन की बागडोर लाल कुँवर को सौंप रखी थी । शासन की सारी गतिविधि की देखरेख लाल कुँवर के हाथों में थी । राजकोष की चाभियां तक उसी के हाथों में थी । लाल कुँवर का उल्लेख इसलिए किया गया है । क्योंकि वासना ग्रसित शासक वर्ग वस्तुत: शासन के अयोग्य हो चुका था । केन्द्रीय सत्ता से सम्बद्ध राजा महाराज तालुकेदार जमींदार सामन्त सभी विलास प्रियता के शिकार थे ।

तुलसीदास की पंक्ति -

"काम कुसुम धनु सायक लीन्हे

सकल भुवन अपने बस कीन्हीं"

जैसी स्थिति देश व्यापी बन गयी थी ।

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि रीतियुग में प्राय: सभी कवि कलाकार राजाओं के संरक्षक में रहते थे और आश्रयदाताओं की चाटुकारिता पर अपनी रोजी-रोटी की व्यवस्था करते थे । केशवदास के बाद चिन्तामणि, मतिराम, पद्माकर, भूषण , देव, बिहारी, घनानंद बोधा, ठाकुर आदि जितने भी हिन्दी केकवि हुए । सभी आश्रयदाताओं की खुशामद बरामद में लगे रहे । कवियो ने कविता के लिए प्रेम और श्रृंगार को अपना कथ्य बनाया इन कवियों ने स्वकीया की प्रशंसा की लेकिन स्वकीया पर "भलो-भलो कहि छाड़िए" सिद्धान्त के आधार पर मात्रा में स्वल्प की रचनायें की । परकीया पर इनकी विशेष दृष्टि रही और उसको लेकर अपनी अश्लील मानसिकता की भड़ास निकालने का उपक्रम किया इस काल खण्ड में नारी कवियों की संख्या अत्यन्त सीमित रही । अधिकांशत: पुरुष वर्ग ने ही रचनाये की और कथ्य के रूप में कृष्ण राधा और गोपिकाओं के नाम पर नितांत मांसल सांसारिक रचनाये की ।

दास कवि ने तो स्पष्ट ही लिखा --

"रीझियें सुकवि सो तो जानो कविताई
ना तो राधिका कन्हाई के सुमिरन को बहानो है"

प्रकट ही आध्यात्मिक ईश्वरोवतार भगवान कृष्ण को इन कवियों ने लौकिक नायक का पद प्रदान कर उनका रूपायन एक सड़क छाप लम्पट व्यक्ति के रूप में किया । कृष्ण के नाम के साथ जुड़ने के कारण तथाकथित राधा और गोपिकाएं मनोरंजन का साधन मान लिया गया ।

रीतिकालीन कविता के मूल्यांकन के प्राय: तीन मान दण्ड रहे है -- रीतिकला अथवा अलंकरण और श्रृंगार इसमें संदेह नहीं जो रचनायें कलात्मक है वे भूरीशाह श्लाघ्य है । ऐसी कविताओं में अलंकृति और व्यंजना का मणिकांचन सहयोग सहनीय है ।
यथा -

"कुन्दन को रंग फीको लगै, झलकै अति अंगन चारू गुराई ।
आंखिन में अलसानि चितौनि, मे मंजु विलासन की सरसाई ।।
को बिन मोल बिकात नहीं, मतिराम लहै मुसकानि मिठाई ।
ज्यों-ज्यों निहारिए नेरे है ,नैननि त्यों-त्यों खरी निकटै सी निकाई।

मतिराम का यह छन्द सुरूचि सम्पन्नता का द्योतक है । इसमें कवि ने नायिका के रूप सौन्दर्य का मनोरम वर्णन करते हुए सुन्दरता को कसौटी पर प्रस्तुत कर दिया है । कवि के अनुसार सौन्दर्य सूक्ष्मता से निरखने और परखने का विषय है ।

घनानंद एक निष्कपट सरल हृदय प्रेमी थे । उन्होंने सुजान से अन्तरंग स्तर पर प्रेम किया था । जब उन्हें देश निकाला दे दिया तो । स्वभावतः वे वियोग जनित पीड़ा से ग्रसित हो गये उन्होंने सुजान से सम्बोधित करते हुए प्रेम को निकस {कसौटी} को अभिव्यक्त किया -

"अति सूधो सनेह को मारग है जहां नैक सयानप बांक नहीं ।
तहां सांचे चलें तजि आपनपौ झझकैं कपटी जे निसांक नहीं ।।
घनानंद प्यारे सुजान सुनो यहां एक तें दूसरे आंक नहीं ।
तुम कौन धौं पाटी पढ़े हो लला, मन लेहु पै देहु छटांक नहीं ।।

प्रेम क्या है, कैसे करना, कौन उसके लिए कुपात्र अथवा सुपात्र है इसे घनानंद ने नितांत सरल विधि से उजागर कर दिया है प्रेम में विश्वासघात घनानंद की दृष्टि से कदापि वांछनीय नहीं निश्चय ही विश्वासघात अक्षम्य कोटि का अपराध है घनानंद भुक्त भोगी थे । इसलिए उन्होंने अपनी अनुभूति को निस्संकोच बेलाग बेलौस व्यंजित किया है ।

रीतिकालीन काव्य में अनुशीलन का एक दूसरा तथ्य है जिसे बहुत वांछनीय नहीं कहा जा सकता है । रीतिकाल के पतन का एक मूलभूत कारण रीतिकालीन कवियों की रचनायें रूढ़िवादिता से ग्रसित है । वे अश्लीलता के कारण दूषित है इन कविताओं में प्रगतिशीलता का नितांत अभाव है ऐसी रचना में मानव जीवन का

अनुमति देने में अक्षम है परकीया के चित्रण में कवियों ने अपने घरों की माताओ, बहनो, बेटियों और बहुओं तक को चौराहे पर लाकर खड़ा कर दिया है । रीतिकाल के अधिकांश कवि इस मानसिकता व्याधि के शिकार रहे है । बिहारी का टकसाली दोहा अपनी अर्थगर्भितव्यंजना में इसी छवि को उकेरता है ।

"नहिं पराग नहिं मधुर मधु" सांकेतिकता में उठा अबोध बलिका की छवि उरेहता है । जिसे ये तक पता नहीं कि यौवना क्या है । जयपुर नरेश उसके शरीर से खेलने में इतने व्यस्त हो जाते है । बिहारी की साहसिकता की प्रशंसा करनी होगी । कि उन्होंने दो पंक्तियों से महाराजा जयसिंह को चुनौती दे दी । इस चुनौती का परिणाम स्वयं बिहारी के लिए घातक भी हो सकता था । यदि जयसिंह उन पर कोप करता । ये तो संयोग था कि बिहारी द्वारा व्यक्तिगत जीवन में हस्तक्षेप किये जाने पर भी उसने अपनी समझ और शालीनता का परिचय दिया । यहाँ जो बात मैं रेखांकित कर रही हूँ । वह कि नारी का उसकी काया का किस पर किस सीमा तक इस काल में दुरूपयोग किया जा रहा था ।

कवियों ने ऐसे भी चित्र प्रस्तुत किये है जहाँ नारी की दुस्साहसिकता लक्षित की जा सकती है, निम्नांकित छन्द कुछ इसी प्रकार की अभिव्यक्ति करता है :-

"फाग की भीर अहीरन महि गोविन्द लै गये भीतर गोरी ।
पाई करी मन की पद्माकर ऊपर डारि अबीर की झोरी ।।
छोर पीताम्बर कम्मर दै सो विदा दई मीड़ि कपोलन रोरी ।
नैन नचाइ कह्‍ मुसकाइ लला फिर आइयों खेलन होरी ।। -- (1)

यहाँ ध्यान देने की बात है कि माहौल होली का है । और सन्दर्भ होली से जुड़े हुड़दंग का है । मथुरा वृन्दावन में आज भी होली का त्योहार जोर-शोर से मनाया जाता है और गोपियों की उत्तराधिकारिणी महिलाएं सक्रिय रूप से होली में मुक्त भाव से सहयोग करती हैं । किन्तु पवित्र रीत और प्रेम से संपृक्त है ये खुली वस्तु है कि प्रेम में उभय पक्षों का सक्रिय सार्थक उपयोग अनिवार्य जैसा है उर्दू के शायर ने इस तथ्य को नितांत सरल ढंग से व्यक्त कर दिया है --

उल्फत का तब मज़ा है कि दोनों हो बेकरार
दोनों तरफ हो आग बराबर लगी हुयी ।

जो गोपिका कृष्ण को बलात् घसीट कर घर के भीतर ले गयी उसने कृष्ण के साथ क्या मनमानी की यह अनभिव्यक्त होकर भी सहज कल्पनीय है ।

रीतिकाल के कवियों ने भारतीय विशेषत: हिन्दू समायुक्ता को विस्मृत कर अपने आश्रय दाताओं की चापलूसी में राति-राति

---

(1) पद्माकर - जगद्विनोद 264

असमाजिक अश्लील अवांछनीय घृणित अभिव्यक्तियों को स्थान दिया जो समाज के लिए सुपाठ्य नहीं कही जा स सकती हैं । मेरी समझ बुद्धि से समाज को प्रगतिशील तत्वों को पटक-पछोड़ कर ऐसी कुरीति को ~~अश्लीलता~~/अश्लीलतापूर्ण रचनाओं का बहिष्कार करना चाहिए । जो रचना सभ्य संस्कृति परिवार अथवा समाज में सबकी उपस्थिति में पढ़ी न जा सके । उसका समाज में स्वागत असंभव है ।

रीतिकालीन कविता के अन्तर्गत जो आपत्तिजनक वस्तु है वो ये कि इसमें भगवान कृष्णऔर राधा के ना पर ढेरों अश्लील वर्णन किये गये हैं । कविगण चाहते तो राधा कृष्ण के स्थान पर सीधे-सीधे भौतिकता से जुड़े मनुष्यों को न नायक-नायिका के रूप में स्थापित कर सकते थे । तब राधा कृष्ण को ब्याज बनाकर उन्हें अपने आन्तरिक भड़ास को अभिव्यक्त करने की आवश्यकता नहीं होती ।

कृष्ण का चरित्र भगवान को सोलह कलाओं से सम्पृक्त माना गया है । उनके व्यक्तित्व के तीन रूप सामान्यत: उपलब्ध हैं । प्रथम रसिक शिरोमणि श्रीकृष्ण, द्वितीय राजनीतिक श्रीकृष्ण और तृतीय सर्वाधिक महत्वपूर्ण है ।
योगेश्वर श्रीकृष्ण ।

श्रीमद्भागवत गीता के रूप में कृष्ण का वक्तव्य हमें उपलब्ध है जिसमें कि वे भक्त प्रवर अर्जुन के माध्यम से सम्पूर्ण संसार के लिए अपनी शिक्षाएं और उपदेश छोड़ रहे हैं गीता की कुछ प्रमुख बातें उल्लेखित की जा रही हैं ।

गीता के अन्तिम अध्याय में एक प्रकार से मानव धर्म की आख्या की गई है -

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि माशुचः ।। {1}

इस कथन का आशय नितांत प्रकट है श्रीकृष्ण के अनुसार मानवता को धर्म के पचड़े में न पड़कर सीधे भगवान से सम्पर्क करना चाहिए और वे मानवता का आश्वस्त करते हैं कि उन्हें समग्र पापों से मुक्त कर देंगे ।

मानव जीवन कर्म करने के लिए हैं कर्म से आशय है सत्कर्म और सदाचार से है मनुष्य को फल की इच्छा नहीं करनी चाहिए स्पष्ट है कि धर्मपरायणता के मार्ग पर चलने से उसे स्वकर्म का सफल ही प्राप्त होगा । और तीसरी बात कि वे संसार में दुराचार की अतिव्याप्ति पर आवश्यकतानुसार पुनः पुनः अवतार लेंगे और धर्म परायण लोगों का सन्मार्ग पर लगायेंगे ।

{1} श्रीमद्भागवत गीता ल अष्टादश अध्याय
श्लोक 66 पेज संख्या, 329

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानम धर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।।

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ।। -- {1}

सोचने की बात है कि कवियों ने भगवान कृष्ण के इस प्रमुख रूप की उपेक्षा कर उनके व्यक्तित्व को अपनी आन्तरिक मानसिक विकृति के कारण मलिन किया । श्रीकृष्ण का रसिक शिरोमणि व्यक्तित्व प्रेम का संदेश देता है इसमें कोई विवाद नहीं । किन्तु उस प्रेम में वासनात्मकता और कामान्धता के लिए कोई स्थान नहीं । भक्तिकालीन कवियों ने विशेषत: अष्टछापी कवियों ने श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व को इसी प्रकार की गरिमा और महिमा से अलंकृत करने का प्रयत्न किया है । इसलिए कभी-कभी भूल चूक हो जाती है । अष्टछाप के प्रतिनिधि कवि और साहित्य कोश के सूर ने श्रीकृष्ण को अत्यन्त व्यापक रूप में चित्रित किया है । कहा जाता है कि सूर ने सवालाख पद बनाये थे । ये हिन्दी संसार का दुर्भाग्य है अब उस महाकवि को केवल पाँच हजार के

{1} श्रीमद्भागवत गीता - चतुर्थ अध्याय
श्लोक -7,8 पेज संख्या 12

आस-पास पद उपलब्ध है । मानवीय दृष्टि से आंकलन करने पर सूरदास के ~~श्रीकृष्ण~~ चीरहरण लीला के पदों में किंचित मांसलता लक्षित हो जाती है । जैसे गोपिकाओं जब यमुना में स्नान करती है, तो श्रीकृष्ण उनके वस्त्र चुरा लेते है विवश होकर गोपिकायें कहती है --

"हमारे अम्बर देव मुरारी"

इसके उत्तर में श्रीकृष्ण कहते हैं :-

"तुम्हरे अम्बर तबही दैहे ।
जलते हेवैं न्यारी ।।

भौतिक दृष्टि से देखे तो ऐसे पदों को सराहनीय नहीं कह सकते है किन्तु विद्वानों ने सूर के इस प्रकार के पदों को आध्यात्मिकता के अनुरंजन से रंजित कर इनका गहन गंभीर अर्थ किया है । आध्यात्मिक सन्दर्भ में आत्मा और परमात्मा का मिलन माया के आवरण से मुक्त होने पर ही संभव है ।

रीतिकालीन कवियों ने आश्रयदाताओं को प्रसन्न करने के लिए सामान्यतय: राधा कृष्ण के व्यक्तित्व पर अपनी कुत्सिक भावनाओं का ही आरोपण किया है वस्तुत: रीतिकालीन कवियों के काव्य और राधा विष्णु और लक्ष्मी के अवतार न होकर सामान्य मनुष्य ही रहे हैं ।

गोस्वामी तुलसीदास ने मंदोदरी और रावण की वार्तालाप में लिखा है कि जाड़े की रात कष्ट प्रद होती है। मंदोदरी अपने पति से कहती है कि सीमा को राम के हवाले कर दो । क्योंकि राक्षस कुल के लिए "सीता सीत निशा सम आयी" है । किन्तु सामन्तीय समाज में रहने के अभ्यस्त पद्माकर इस शीत की समस्त सामग्री का उल्लेख निम्नलिखित कवित्त में करते हैं । जिसमें सुबाला भी सम्मिलित है ।

गुलगुली गिल मै, गलीचा गुनीजन अहैं,
चाँदनी है चिकै हैं, चिरागन की माला है ।
कहैं पद्माकर त्यों गजक गिजा हैं सजी,
सजे है सुराही हैं, सुरा है और प्याला है ।।

सिसिर के पालो को न व्यापत कसाला तिन्हे,

जिनके अधीन एतै उदित मसाला है ।

तान तुक ताला है, विनोद के मसाला है,

सुबाला है दुसाला है बिसाला चित्रशाला है ।।
--{1}

कवियों की मानसिकता किस सीमा तक काम के रंग में रंगी हुयी है इसका वर्णन करते हुए कविजन अघाते नहीं कवि "दूलह" का निम्नलिखित छन्द इस सन्दर्भ में उद्धरणीय है ।

धरी जब बाहीं तब करी तुम नाही

पाइं दियो पलिकाही नाही, नाही कै सुहाई हौ

बोलत मैं नाही, पर खोलत मैं नाहीं,

कवि दूलह उछाही लाख भाँतिन लहाई हौ ।

चुम्बन मैं नाहीं परिरंभन मैं नाहीं ।

सब आसन विलासन मैं नाहीं ठीक ठाई है

मेलि गुलबाही, केलि कीन्हीं चितचाही

यहाँ हाँ ते भली नाहीं, सो कहाँ ते सीखआई है ।।--{2}

{1} पद्माकर

{2} रीतिश्रृंगार - दूलह पृष्ठसंख्या 175

इसी प्रकार नायक की कामुकता का उदाहरण अग्रलिखित पंक्तियों में लक्षनीय है --

"केलि के रात अघाने नहीं दिन हो में लला पुनि घात लगाई ।
प्यास लगी है पानी दै जाइयो भीतर बैठिके बात सुनाई ।।
जेठ पठाई गई दुलही हँसि-हँसि हरे, मतिराम बुलाई
कान्ह के बोल में कान न दीनो, सो गेह की देहरी में धरी आई
--।।

मतिराम मुक्तभाव से नायक की चतुराई भरी धृष्टता का स्पायन करते हैं किन्तु नायिका नायक के सांकेतिक व्यंजना की उपेक्षा कर जल द्वार पर रख कर खिसक जाती है । मतिराम ने इस प्रकार सब कुछ कहकर भी बहुत कुछ गोपनीयता बनाये रखा है ।

नायिका की मानसिकता काम के प्रसंग में कभी-कभी भावना के प्रवाह में बह जाती है और आत्म नियंत्रण न कर पाने के कारण वो नायक को बुलाने के लिए दूती का उपयोग करती है दूती नायिका से भी काम प्रसंग में चार हाथ आगे निकल जाती है इस प्रकार विलक्षण वर्णन अधोलिखित छन्द में दर्शनीय है :-

धाई गई केसरि कपोल कुच गोलन की,
पीक लीक अधर अमोलनि लगाई है ।
कहे "पद्माकर" त्यों नैनहू निरंजन में,
तजत न कम्प देह पुलकनि छाई है ।।
~~दूतिपनो/छोड़ि/धूतपन/में/सुहाई/है/~~
बाद मति ठानैं झूठ वादिनी भई री अब,
दूतिपनो छोड़ि धूतपन में सुहाई है ।
आई तोहि पीर न पराई महापापिन तू

प्रस्तुत अवतरण में काम के सन्दर्भ में उत्तेजना और आवेश के वशीभूत नारियों के बीच होने वाली स्पर्धा का चित्रण अद्भुत है वास्तव में आश्रयदाताओं के यहाँ इतनी अधिक सुन्दरियां निवासित होती थी कि उनमें रूप की प्रतियोगिता होना नितांत स्वाभाविक था । इतिहास लेखकों ने मध्ययुग के इस परिवेश की ओर इतिहास ग्रन्थों में विशद् उल्लेख किया है । राज दरबारों में प्राय: पट्-रानियों, रानियों रखैलों वेश्याओं दासिओं और दासो के अखाड़े जैसे हुआ करते थे । सूर्योदय के साथ ही सुन्दरियों अपने रूप श्रृंगार में जुट जाती थी । किस रात किस क्षण किस महिला का भाग्योदय हो सकता था । इस संभावना को लेकर ये सौन्दर्य प्रतियोगिता चलती थी । देहयष्टि का अधिक से अधिक श्रृंगार करने में महिलाओं का मनोरंजन तो होता ही था साथ-साथ दिन भी अच्छा कट जाता था । कहने का प्रयोजन ये है, मध्ययुगीन परिवेश यौवन और श्रृंगार से अभिसिक्त था । चतुर्दिक भौतिकतावादी

वादी संस्कृति का साम्राज्य था । मुगल शासको में शाह-जहाँ सर्वाधिक शौकीन था । ताजमहल उसके प्रेम का प्रतीक है । जो आज भी संसार के सात आश्चर्यों में से एक माना जाता है और दर्शकों को आकृष्ट करता है । दिल्ली में "दिवाने ए खास" की प्राचीर पर उसकी दिव्य मानसिकता का आलेख उत्कीर्ण है ।

अगर फिरदौस वर रूए जमीं अस्त ।
हमीं अस्तो, हमीं अस्तो,हमीं अस्तो ।।

यदि सृष्टि में कहीं स्वर्ग है तो वह यहीं है यही है यहीं है ।

रीतिकाल के कवियों में देव तथा बिहारी की रचनात्मकता के अभाव में प्रस्तुत आलेख कदाचित् अधूरा रह जायेगा । इनकी रसिक मानसिकता का सन्दर्भ देना आवश्यक है देव और बिहारी दोनों ही नायिकाओं के कवि माने जाते है देव लिखित रचनाओं की संख्या लगभग चालीस के आस पास कही जाती है । किन्तु इनमें 18 को प्रमाणित माना गया है ।

महाकवि देव ने अनेक प्रकार की नायिकाओं का उल्लेख किया है जिनमें कुछ के नाम इस प्रकार है :-

नागरी - देवलदेवी, पूजनहारी, द्वारपालिका ।

राजनगर- जौहरीन, छीपीन, पटवाइन, सुनारिन
गंधिन तेलिन, तमोलिन आदि ।

ग्रामीण- अहीरिन, काछिन, कलारिन, गुनेरी, कहारी

परिकीतए-बनजारिन, जोगिन नटनी कुहारनी --- §1§

पीत रंग सारी गोरे अंग मिली गई देव,
स्त्रीपल उरोज आभा आभासै अधिक सी ।
छूटो अलकीन छलकीन जलबूदन की,
बिना बेंदी बंदन बदन शोभा बिकसी ।
तजि तीज कुंज पुंज भ्रमर मधुप गुंज गुंरत,
मंजु रव बोले बाल पिकसी,
नीवो उकसाई नेकु नयन हंसाय हंसि,
ससिमुखी सकुचि सरोवर है निकसी ।।--§2§

---

§1§ हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ० नगेन्द्र
पृष्ठ संख्या - 256

§2§ देव

ऊपर दिये गये छन्द में देवदत्त ने अपनी प्रकृति के अनुसार नायिका का मांसल चित्र उपस्थित किया है चित्र में रूप का सम्मोहन है जो भावक को बाँधने में सक्षम है ।

देव की भाँति बिहारी को भी नायिकाओं का कवि कहा गया है । बिहारी का सामान्य विशेषत: ये रही है कि वे सखियों की पारस्परिक बातचीत को दो पंक्तियों में अवतरित कर बड़ी सी बड़ी बात सहज ढंग से प्रस्तुत कर देने में सक्षम रहे हैं । उन्होंने श्रीकृष्ण को विरह जनित कामपीड़ा से ग्रसित दिखाया है ।

नीचे प्रस्तुत दोहा कृष्ण की इस छवि को उजागर करता है ।

> कौर विरह ऐसी तऊ परै हाल बेहाल,
> कहुँ मुरली कहुँ पीतपट कहुँ मुकुट बनमाल ।

बिहारी बड़ी चतुराई से कृष्ण की तथाकथित दशा का निरूपण करते हुए ये बताना चाहते हैं कि सखी नायिका को प्रेरित कर रही है कि वे कृष्ण के पास जा कर उनका शारीरिक और मानसिक उपचार करें नायक और नायिका की नेत्रों के द्वारा पारस्परिक सालोक्य बिहारी के उद्धृत दोहे में अवलोकनीय है ।

> कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत खिलत, लजियात।
> भरेभौन में करत है, नैननु ही सब बात ।।

नेत्रों की भाषा मूक होकर भी कितनी मधुर होती है ये प्रेमी हृदय ही भली-भाँति जानते है और अनुभव करते हैं,

प्रस्तुत दोहे में आंखो-आंखो में जो बात चीत का खुलासा करते हुए बिहारी ने उभय पक्षों का रीझना खीझना और संकेत में मिलन कार्यक्रम आदि का परम सूक्ष्म चित्रण किया है बिहारी अपने सरसता के कारण रीति काल के सर्वप्रिय कवि माने जाते हैं तुलसी, सूर, केशव आदि के पश्चात् ख्याति की दृष्टि से बिहारी सर्वाधिक यशस्वी रहे हैं, बिहारी को अन्य रीतिकालीन, कवियों की अपेक्षा नारी मनोविज्ञान की व्यापक और गहन परख तथा पहचान थी । अपने आश्रयदाता को प्रसन्न करने के लिए उन्होंने बहुतेरे हास्यास्पद दोहे भी लिखे हैं और कुछ एक अश्लीलता की अभिव्यक्ति करने वाले भी ऐसे दोहे उल्लेखनीय तो हैं किन्तु बिहारी की सहज मानसिकता के प्रतिनिधि नहीं कहे जा सकते ।

यथा बिहारी की प्रस्तुत दोहा -

परयो जोरु विपरीत रीत रुपी सुरति संघीर।
करत कुलाहल किंकनी गह्यौ मौन मंजीर ।। {1}

{1} बिहारी बोधिनी

दोहा नम्बर -34

सच तो यह है कि रीतिकालीन साहित्य में इस प्रकार की अवांछनीय सामग्री को निकाल देना चाहिये ।

रीतिकाल में सामान्यतया पुरुष कवि अधिकांशतः रहे हैं और उन्होंने प्रत्यक्ष तथा परोक्ष विधियों से नारी की मानसिकता के चित्र रचे हैं । कवयित्रियाँ नाम को कुछ एक रही हैं किन्तु वे रीतिकालीन श्रृंगारिक वातावरण से अनुरंजित प्रतीत होती हैं अपनी ओर से इस युग में संभवतः स्त्री को कुछ भी कहने के लिये नहीं रहा है सामान्यतया इस युग में महिलाओं का स्थान पुरुष की सम्पत्ति जैसा रहा है वह जीवित व्यक्ति होकर भी क्रीड़ा को सामग्री समझी गयी है और तद्वत् उसकी कवियों ने उपयोग-सदुपयोग अथवा दुरुपयोग जो भी कहना चाहे, किया गया है ।

अश्लीलता की धारणा युग सापेक्ष्य है एक ही प्रकार का वस्तु या व्यक्त रूप एक युग में अश्लील कहा जा सकता है और दूसरे युग में नहीं । इसका प्रमाण हमें संस्कृत की अनेक रचनाओं को पढ़ने पर मिल जाता है ।

कवि कुल गुरु कालिदास भर्तृहरि अमरुक तथा सप्तशती और मुक्तक कार अनेक संस्कृत के कवि हैं । जिनकी रचनाओं में नारी शरीर के अंगों की भावों का ऐसा वर्णन है जो उस समय अश्लील नहीं था, आज अश्लील समझे जाते हैं ।

भक्ति युग में ही सूरदास, नन्ददास, विद्यापति,जायसी, सेनापति आदि के अनेक वर्णन ऐसे हैं । जो रीतिकालीन वर्णनों से अधिक अश्लील कहे जा सकते हैं आधुनिक युग में भी इस प्रकार के वर्णनों की अभाव नहीं है प्रकृतिवादी और प्रगतिवादी काव्यों तक ऐसे वर्णन मिलते हैं जो हेय और अश्लील ऐसी दशा में रीति-कालीन सौन्दर्य वर्णन के प्रसंग में और विशेष रूप से नखशिख सौन्दर्य चित्रण में कतिपय अंगों का यदि ऐसा वर्णन मिलता है जो आज अश्लीलता की सीमा में आ जाता है तो उसके आधारपर हम समस्त काव्य को लांछित कहे यह उपयुक्त नहीं ।

कलादृष्टि/सामाजिक दृष्टि

इस प्रकार शारीरिक अंगों का वर्णन एक देश में अश्लील हो जाता है दूसरे देश में नहीं दक्षिण पूर्वी देशों में अनेक स्थलों पर स्त्रियों के लिये कमर से ऊपर का समस्त खुला या केवल आभूषण युक्त अंग-प्रत्यंग वहाँ के लिये अश्लील नहीं है , जबकि अपने देश वहाँ के लिये अश्लील नहीं है, जबकि अपने देश के नागरिक समाज में उसे अश्लील माना जाता है उसी प्रकार चित्रकला और मूर्तिकला के अन्तर्गत पुरुष और नारी के अनावृत रूप भी अश्लील नहीं माने जाते ऐसी दशा में यदि रीतिकालीन कवि अंग-प्रत्यंग के सौन्दर्य का निरूपण करके अपनी कल्पना द्वारा इस सौन्दर्य को और भी अधिक

उत्कर्ष प्रदान करना चाहता है तो उसे लांछित नहीं किया जा सकता है इसके साथ ही साथ इस प्रसंग में एक और भी बात है जिसका सम्बन्ध प्रचलन और परम्परा से है । कभी-कभी एक ही पदार्थ या भाव का द्योतक शब्द एक भाषा में अश्लील नही है दूसरे में अश्लील माना जाता है अंग्रेजी के ब्रेस्ट, किस, एम्ब्रेस आदि शब्दों हमें अश्लील नहीं लगते पर इनके हिन्दीपर्याय कुच, चुम्बन, आलिंगन, आदि सामान्यत: अश्लील समझे जाते हैं ऐसी दशा में अश्लीलता युग देश और प्रसंग सापेक्ष वस्तु है उसके आधार पर सामान्यत: समस्त रीतिकालीन काव्य अवांछनीय §अश्लीलता§ की मोहर लगाकर उसे बहिष्कृत नहीं किया जा सकता ।

निष्कर्ष-

रीतिकाल के कवियों की शृंगारिकता मुख्य प्रवृत्ति थी । इनकी शृंगारिकता में अपेक्षित गंभीरता की कमी थी क्योंकि काव्य रसिकता से पोषित था । इसी कारण रीतिकाव्य की शृंगारिकता में कामप्रवृत्ति की सहज एवं स्वच्छन्द अभिव्यक्ति हुयी है इस साहित्य में जीवन को उसकी सहजता में देखने और जीने की चेष्टा वर्तमान है अतः इस युग में स्वच्छन्दता वादी में जो प्रकृत गंभीरता दिखाई पड़ती है उसके लिए उनकी स्वच्छन्द मनोवृत्ति छायी है जिस कामभावना की अभिव्यक्ति उनके काव्य में हुयी है वह मात्र प्रवृत्ति होकर रह गयी है यही कारण है किकेवल बंधी बंधाई उन्माद चेष्टाओं द्वारा खिलौने की तरह खेली जाने वाली नारी ।

पुस्तक- नामानुक्रमाणिका

§1§ केशव और उनका साहित्य
लेखक- डा० विजय पाल सिंह
प्रकाशक-राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली
संस्करण-प्रथम संस्करण ई० 1961

§2§ केशव ग्रन्थावली
सम्पादक- श्री विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
प्रकाशक- हिन्दुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद
संस्करण- प्रथम संस्करण- 1959 ई०

§3§ केशवदास जीवनी कला और कृतित्व
लेखक डा० किरण चन्द्र शर्मा
प्रकाशक-भारतीय साहित्य मंदिर, फव्वारा दिल्ली
संस्करण - 1961

§4§ कवि कुलकल्पतरू
कवि- चिन्तामणि
सम्पादक- नवल किशोर मंत्रालय
संस्करण- सन् 1857

§5§ कवि शिक्षा की परम्परा और हिन्दी रीति साहित्य
लेखक- डॉ सत्य प्रकाश मिश्र
प्रकाशक- चित्रलेखा
संस्करण - प्रथम 1987

{6} केशव ग्रन्थावली खण्ड-1
कविप्रिया, रसिक प्रिया
सम्पादक- विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
प्रकाशक- राम आनंद कृष्ण
प्रथम संस्करण- 1954

{7} घनानन्द और स्वच्छन्द काव्य धारा
लेखक- मनोहर लाल गौड़
प्रकाशक- नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
संस्करण- प्रथम संस्करण वि0 2015

{8} घनानन्द ग्रन्थावली
भूमिका लेखक- आचार्य विश्वनाथ मिश्र
प्रकाशक- ब्रह्मनाथ वाराणसी-1
संस्करण- प्रबोधिनी 2016 वि0

{9} घनानंद कवित्त
लेखक- ब्रजनाथ

{10} चिन्तामणि कवि और आचार्य
लेखक- डा0 विद्याधर मिश्र
प्रकाशक-प्रभा प्रकाशन
प्रथम- संस्करण- 1989

{11} पद्माकर ग्रन्थावली
संपादक विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
प्रकाशक-नागिरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी
संस्करण - 1216 ई0

{12} बिहारी सतसई
मूल संपादक तथा टीकाकार-लल्लू जी लाल

§13§ रीतिकाल की भूमिका,
लेखक- डा० नगेन्द्र
प्रकाशक- गौतम बुक डिपो
प्रकाशन वर्ष - 1949

§14§ रीतिकालीन कविता एवं श्रृंगार रस का विवेचन
§सन् 1600 से 1850 तक§
लेखक- राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी
प्रकाशक- सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा

§15§ रीतिकाव्य संग्रह
डॉ जगदीश गुप्त
प्रथम संस्करण- सन् 1961

§16§ रीतिकालीन रस शास्त्र
लेखक-डॉ सच्चिदानंद चौधरी
प्रकाशक-नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी
प्रथम संस्करण- सम्वत् 2026

§17§ रीतियुगीन काव्य
डॉ कृष्ण चन्द्र वर्मा
प्रकाशक- पुस्तक मंदिर
संस्करण -1965

§18§ रीतिकवियों की मौलिक देन
डा० किशोरी लाल
प्रकाशक-साहित्य भवन
प्रथम संस्करण- 1971 ई०

(19) रीतिकालीन साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि
लेखक- डा0 शिव लाल जोशी
प्रकाशक- सुरेन्द्र नाथ,साहित्य सदन
प्रथम संस्करण- 1962

(20) रीतिकाव्य में श्रृंगार निरूपण
लेखक- सुख स्वरूप श्रीवास्तव
प्रकाशक- प्रगति प्रकाशक
प्रथम संस्करण 1972

(21) रीतिकालीन सतसई साहित्य में नायिका वर्णन
लेखिका डा0 अल्का अबोल
प्रकाशक- सुखपाल गुप्त
प्रथम संस्करण- 1985

(22) रीतिकालीन काव्य की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि
डा0 वें0 वेंकट रमण राव

(23) रीतिकालीन श्रृंगार भावना के स्त्रोत
लेखक- डा0 सुधीन्द्र कुमार

(24) रीतिकालीन साहित्य का पुर्नमूल्यांकन
डा0 राम कुमार वर्मा
साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड
प्रथम संस्करण - 1984

(25) रीतिकालीन काव्य सिद्धान्त
लेखक-डा0 सूर्य नारायण द्विवेदी
भूमिका-डा0 नन्द किशोर देवराज

(26) रीतिकाव्य
लेखक डा0 जगदीश गुप्त
प्रकाशक- वसुमती
प्रथम संस्करण -1968

(27) रीतिकालीन काव्य पर संस्कृत काव्य का प्रभाव
लेखक- डॉ दयानन्द शर्मा
प्रकाशक- साहित्य संस्थान
प्रकाशन काल-1976

(28) रीतिकालीन श्रृंगारकवियों की नैतिक दृष्टि
लेखक- डॉ शकुन्तला अरोरा
प्रकाशक- सन्मार्ग प्रकाशन
प्रथम संस्करण- 1978

(29) रीतिकाव्य के शाश्वत तत्व
लेखक- डा0 गार्गी शरण मिश्र
प्रकाशक- स्मृति प्रकाशन
प्रथम संस्करण -1998

(30) रीतिकाव्य नवनीत
लेखक-डॉ भागीरथ मिश्र
प्रकाशक- ग्रन्थम रामबाग, कानपुर

(31) रीतिमुक्त कविता
लेखक-डा0 चन्द्रशेखर

(32) रीतिकालीन काव्य विधाओं का शास्त्रीय अध्ययन
लेखक- डा0 पवन कुमार जैन
प्रकाशक- राजेश गोयल

(33) मध्यकालीन भारतीय संस्कृति
लेखक डा० लईक अहमद
प्रकाशक- शारदा पुस्तक भवन
संस्करण- 1995

(34) महाकवि मतिराम
रचना रसराज
प्रकाशक चौखम्बा विद्याभवन
प्रथम संस्करण सं० 2017

(35) हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास
लेखक- राजेन्द्र सिंह गौड़
प्रकाशक-साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड इलाहाबाद
प्रथम संस्करण- सं० 2013

(36) हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास (षष्ठ भाग)
रीतिकाल:रीतिबद्ध काव्य (1700-1900)
सम्पादक -डा० नगेन्द्र
प्रकाशक-नागरी प्रचारिणीसभा, काशी
संस्करण-2015 वि०

(37) हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास
लेखक -राजेन्द्र सिंह गौड़
प्रकाशक-साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड इलाहाबाद
प्रथम संस्करण- 2013

(38) हिन्दी रीतिकाव्य में सौन्दर्य बोध
लेखिका-उषागंगाधर राव साजापुरकर
प्रकाशक-स्मृति प्रकाशन
प्रथम संस्करण- 1985

(39) हिन्दी रीति परम्परा के प्रमुख आचार्य
लेखक-डॉ सत्यदेव चौधरी
प्रकाशक- हिन्दी साहित्य प्रेस इलाहाबाद
प्रथम संस्करण- सन् 1958

(40) हिन्दी रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य
लेखक- डा0 मोहन अवस्थी
प्रकाशक- सरस्वती प्रेस

(41) हिन्दी परम्परा के प्रमुख आचार्य
लेखक-डॉ सत्यदेव चौधरी
प्रकाशक- हिन्दी साहित्य प्रेस इलाहाबाद
प्रथम संस्करण-1958

(42) हिन्दी रीतिकविता के परिप्रेक्ष्य में कविमण्डल का अध्ययन
लेखक डा0 देवेन्द्र
प्रकाशक-राजस्थानी ग्रन्थागार

(43) हिन्दी साहित्य का इतिहास
लेखक-डॉ जे0पी0श्रीवास्तव

(44) विद्यापति
व्यक्ति और कवि
लेखक-डॉ राम सजन पाण्डेय
प्रकाशक-दिनमान प्रकाशक

(45) पद्माकर ग्रन्थावली
सम्पादक-विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
प्रकाशक- नागरी प्रचारिणी सभा
प्रथम संस्करण- 2016 ई0

(46) देव और उनकी कविता
लेखक डॉ नगेन्द्र